नवंबर 2024

धर्म एवं अध्यात्म के तत्वज्ञान का वैज्ञानिक विश्लेषण

अखण्ड ज्योति

वर्ष 88 | अंक - 11 | प्रति - ₹ 25 | ₹-300 वार्षिक

18 ▶ निश्छल भक्ति से हुई सुव्रत को भगवत्प्राप्ति

34 ▶ अहंजनित क्रोध के आवेश से रहें सावधान

40 ▶ जीवन में उतरे तभी है ज्ञान का मूल्य

64 ▶ मानवीय चेतना की अपरिमित शक्ति

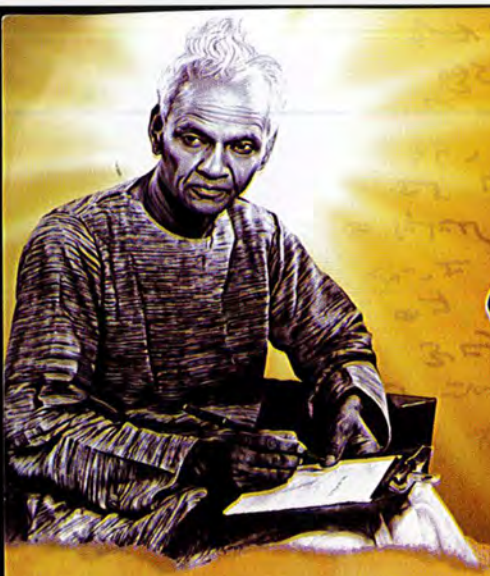

75 वर्ष पूर्व अखण्ड ज्योति

नवंबर–1949

(पृष्ठ - 20)

गायत्री का सर्वश्रेष्ठ एवं सर्वसुलभ ध्यान

मानव मस्तिष्क बड़ा ही आश्चर्यजनक, शक्तिशाली एवं चुंबक गुण वाला यंत्र है, उसका एक-एक परमाणु इतना विलक्षण है कि उसकी गतिविधि, सामर्थ्य और क्रियाशीलता को देखकर बड़े-बड़े वैज्ञानिक हैरानी में रह जाते हैं। इन अणुओं को जब किसी विशेष दिशा में नियोजित कर दिया जाता है तो उसी दिशा में एक लपलपाती हुई अग्निजिह्वा अग्रगामी होती है। जिस दिशा में मनुष्य, इच्छा, आकांक्षा और लालसा करता है, उसी दिशा में, उसी रंग में उसी लालसा में शरीर की अन्य शक्तियाँ नियोजित हो जाती हैं।

पहले भावनाएँ मन में आती हैं। फिर जब उन भावनाओं पर चित्त एकाग्र होता है। यह एकाग्रता, एक चुंबक शक्ति आकर्षण तत्त्व के रूप से प्रकट होती है और अपने अभीष्ट तत्त्वों को अखिल आकाश में से खींच लाती है। ध्यान का यही विज्ञान है। इस विज्ञान के आधार पर, प्रकृति के अंतराल में निवास करने वाली सूक्ष्म आद्यशक्ति, ब्रह्मस्फुरणा 'गायत्री' को अपनी ओर आकर्षित किया जा सकता है। उसके शक्ति भंडार को प्रचुर मात्रा में अपने अंदर धारण किया जा सकता है।

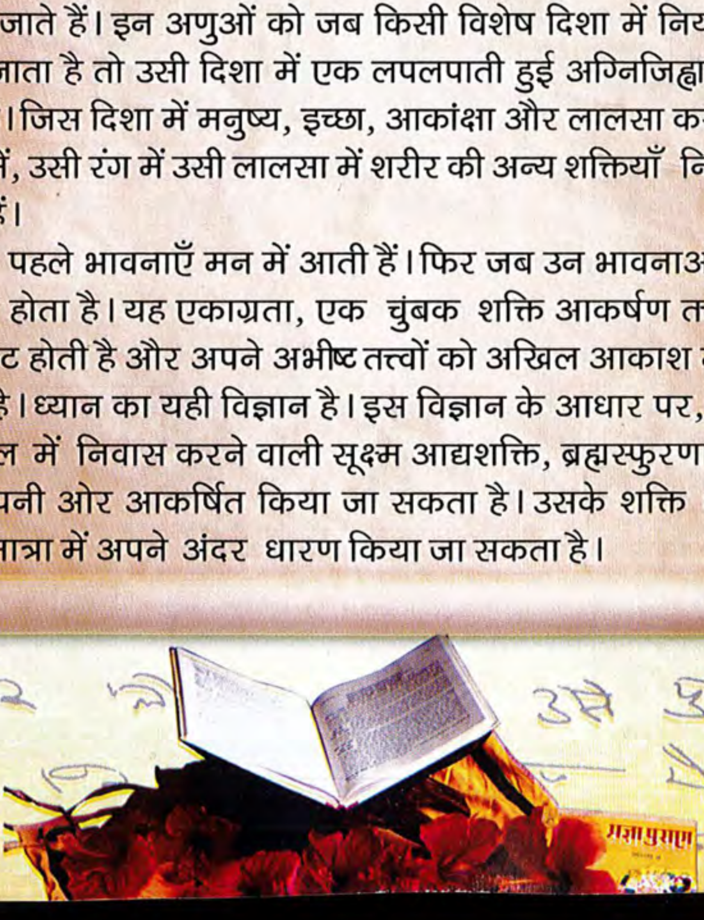

संस्थापक-संरक्षक
वेदमूर्ति तपोनिष्ठ
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य
एवं
शक्तिस्वरूपा
माता भगवती देवी शर्मा
संपादक
डॉ० प्रणव पण्ड्या
कार्यालय
बिरला मंदिर के सामने मथुरा-वृंदावन रोड जयसिंहपुरा, मथुरा (281003)
दूरभाष नं० (0565) 2403940, 2972449
2412272, 2412273
मोबाइल नं० 9927086291
7534812036
7534812037
7534812038
7534812039
समय—प्रातः 10 से सायं 6 तक
कृपया इन मोबाइल नंबरों पर एस. एम. एस. न करें।
नया ई-मेल :
akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org

वर्ष	:	88
अंक	:	11
नवंबर	:	2024
कार्तिक-मार्गशीर्ष	:	2081
प्रकाशन तिथि	:	01.10.2024

वार्षिक चंदा

भारत में	:	300/-
विदेश में	:	2800/-
आजीवन (बीसवर्षीय) भारत में	:	6000/-

अखण्ड ज्योति—ज्ञानज्योति

अखण्ड ज्योति—ज्ञानज्योति बनकर प्रकाशित हुई। महापुरश्चरण के प्रभाव सूक्ष्मजगत् को प्रभावित करने लगे थे। 24वर्षीय महासाधना अपने एक चरण को पूरा कर दूसरे चरण में प्रवेश कर चुकी थी। स्वाधीनता आंदोलन अब तीव्र से तीव्रतर होकर तीव्रतम होने की ओर अग्रसर था। भारतदेश के प्रारब्ध में भी परिवर्तन हो रहा था। यह वही वर्ष था, जब अंतर्दृष्टि की आध्यात्मिक क्षमता वाले महनीय जन भारतवर्ष की स्वाधीन नियति को निहार चुके थे।

सुदूर भविष्य को देखने वाली दिव्यदृष्टि स्वाधीनता के समय होने वाले विप्लव को देख रही थी। चिंता यह भी थी कि स्वाधीनता के बाद विदेशी रंग में रँगे भारतीय किस तरह का जीवन जिएँगे? मूढ़मान्यताओं में फँसे ग्रामीण व शहरी देशवासियों का क्या होगा? एक ओर शिक्षा का दंभ, दूसरी ओर अशिक्षा का दंश। भारतवासी इन्हीं दो के बीच खड़े थे। समाधान यही था कि ऋषियों की ज्ञानज्योति प्रकाशित हो और भारतदेश की प्राचीन ऋषि संस्कृति से भारतवासियों का परिचय कराए, उन्हें प्रशिक्षित करे।

इसी महान उद्देश्य के साथ अखंड दीप की अखंड ज्योति अब ज्ञानज्योति बनकर अखण्ड ज्योति पत्रिका के रूप में प्रकाशित हो उठी। अखंड ज्योति जो अब तक महातपस्वी की आत्मज्योति थी, उसी का प्रकाश ज्ञानज्योति बनकर अखण्ड ज्योति पत्रिका के पृष्ठों पर प्रकाशित होने लगा। अखण्ड ज्योति की पहली प्रति वर्ष 1937 ई० में हाथ के बने कागज पर हाथों से लिखकर कुछ गिने-चुने लोगों तक पहुँची। वर्ष 1940 ई० से इसका विधिवत् प्रकाशन हुआ—तब से अब तक इसने असंख्यों के मन व जीवन को प्रकाशित किया। यह वह ज्योति है, जो कभी बुझेगी नहीं। ❑

▶ 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

विषय सूची

- आवरण—1 — 1
- आवरण—2 — 2
- अखण्ड ज्योति—ज्ञानज्योति — 3
- **विशिष्ट सामयिक चिंतन**
  जलवायु-परिवर्तन और
  गरमी की प्रलयंकारी मार — 5
- परमानंद की अवस्था है योगावस्था — 8
- जगाएँ विश्वास और बदलें जमाना — 11
- **पर्व विशेष—दीपावली**
  वैश्विक त्योहार है दीपावली — 13
- परिवार का प्रयोजन — 16
- निश्छल भक्ति से हुई सुव्रत को भगवत्प्राप्ति — 18
- भगवान श्रीराम का उच्चतम आदर्श — 20
- चरित्र निर्माण के महत्त्व को समझा जाए — 24
- भक्ति की शक्ति है अपार — 26
- मधुमक्खियों का रोचक संसार — 30
- प्रेम — 33
- अहंजनित क्रोध के आवेश से रहें सावधान — 34
- **पूज्य गुरुदेव जैसा मैंने देखा—समझा—26**
  यति और योद्धा की प्रवृत्तियों से संपन्न
  एक समर्थ प्रतिमा — 36
- बढ़ें बुलंदियों के पार — 38
- जीवन में उतरे तभी है ज्ञान का मूल्य — 40
- भार न बने अधिकार — 42
- स्वामी की तरह करें मोबाइल का उपयोग — 43
- **ब्रह्मवर्चस-देव संस्कृति शोध सार—187**
  सांस्कृतिक शोध अध्ययन — 46
- **युगगीता—294**
  राजसिक त्याग से भी नहीं मिलता है त्याग
  का फल — 50
- **परमवंदनीया माताजी की अमृतवाणी**
  श्रद्धा के बीजारोपण की साधना (उत्तरार्द्ध) — 52
- **विश्वविद्यालय परिसर से—233**
  ज्ञान के बोध को कराने का पर्व — 58
- **साधना शताब्दी-विशिष्ट लेखमाला**
  पर्वतों पर उतरतीं प्रकाश-किरणें — 61
- **अपनों से अपनी बात**
  मानवीय चेतना की अपरिमित शक्ति — 64
- आत्म-साधना (कविता) — 66
- आवरण—3 — 67
- आवरण—4 — 68

आवरण पृष्ठ परिचय

विवेकसम्मत बुद्धि के प्रतीक प्रथमपूज्य भगवान गणेश

नवंबर-दिसंबर, 2024 के पर्व-त्योहार

शुक्रवार	01 नवंबर	दीपावली	शुक्रवार	15 नवंबर	गुरुनानक जयंती/ पूर्णिमा/देव दीपावली
शनिवार	02 नवंबर	अन्नकूट/ बेसतुबरस	मंगलवार	26 नवंबर	उत्पत्ति एकादशी
रविवार	03 नवंबर	भाईदूज	बुधवार	11 दिसंबर	मोक्षदा एकादशी/गीता जयंती
बुधवार	06 नवंबर	लाभ पंचमी	रविवार	15 दिसंबर	दत्तात्रेय जयंती
गुरुवार	07 नवंबर	सूर्य षष्ठी	बुधवार	25 दिसंबर	क्रिसमस
मंगलवार	12 नवंबर	देव-प्रबोधिनी एकादशी	गुरुवार	26 दिसंबर	सफला एकादशी
गुरुवार	14 नवंबर	बाल दिवस	सोमवार	30 दिसंबर	सोमवती अमावस्या

★ **यह पत्रिका आप स्वयं पढ़ें तथा औरों को पढ़ाएँ। कुछ समय के बाद किसी अन्य पात्र को दे दें, ताकि ज्ञान का आलोक जन-जन तक फैलता रहे। —*संपादक***

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

विशिष्ट सामयिक चिंतन

जलवायु-परिवर्तन और गरमी की प्रलयंकारी मार

वर्ष 2024 सबसे गरम वर्ष के रूप में याद किया जाता रहेगा। वर्ष के पूर्वार्द्ध में जिस तरह के जलवायु-परिवर्तन के प्रभाव पूरे विश्व में दिखाई दिए, वे चिंताजनक हैं। कहीं गरमी तो कहीं बारिश का तांडव देखा गया। भारत के कई हिस्सों में गरमी का कोहराम मचा रहा। आएदिनों प्रलयंकारी गरमी के प्रकोप से हाहाकार करते लोगों की खबरें आती रहीं। तापमान ने सारे रिकॉर्ड तोड़ दिए, हजारों लोग हीट स्ट्रोक के शिकार होते रहे।

स्पष्ट हुआ कि मानवीय गतिविधियों का जलवायु पर खासा प्रभाव पड़ रहा है, जिसका खामियाजा विविध रूपों में भुगतने के लिए मानवता को विवश होना पड़ रहा है। वैज्ञानिकों का मानना है कि मानवीय गतिविधियों से जलवायु पर गहरा प्रभाव पड़ रहा है; जिसके कारण भारत सहित एशिया एवं विश्वभर के अरबों लोग भीषण गरमी से जूझते रहे, जो अब तक की सबसे अधिक लंबी गरमी की लहरों में से एक थी।

उत्तर भारत में तापमान 50 डिगरी सेल्सियस तक चला गया और कहीं तो इसको भी पार कर गया। पहाड़ों के कई शहरों का तापमान 40 डिगरी सेल्सियस के ऊपर रहा, जो यहाँ के लिए एक असाधारण घटना थी। गरमी के चरम पर मई-जून माह में 40 हजार से अधिक हीट स्ट्रोक के मामले देशभर में दर्ज किए गए।

एक ओर जहाँ इस प्रचंड गरमी ने सैकड़ों जीवन लील लिए तो वहीं पूर्वोत्तर के कई हिस्से भारी बारिश से बाढ़ की स्थिति से जूझते रहे। गरमी का प्रभाव मार्च माह से प्रारंभ हो गया था, जो अप्रैल से जोर पकड़ता गया।

यह मई में अपने चरम की ओर बढ़ा और 19 जून तक कहर ढाता रहा। मानसून से पहले की बारिश की बौछारों के साथ इसमें कुछ राहत अवश्य मिली, लेकिन वर्ष 2024 की गरमी की मार लंबे समय तक याद रहेगी। यूरोपियन यूनियन की क्लाइमेट मॉनिटरिंग सर्विस के अनुसार—वर्ष 2024 का अप्रैल माह, अब तक के रिकॉर्ड में सबसे अधिक गरम अप्रैल माह के रूप में दर्ज किया गया। अप्रैल, 2024 माह का वैश्विक औसत तापमान 21.04 सेल्सियस दर्ज किया गया है। सन् 1991 से 2020 के 3 दशकों की तुलना में यह माह 0.67 डिगरी सेल्सियस अधिक गरम रहा।

रिपोर्ट के अनुसार 2016 के अप्रैल माह की तुलना में इस वर्ष का अप्रैल माह 0.14 डिगरी सेल्सियस अधिक गरम रहा। इससे पहले 2016 के अप्रैल माह को सबसे गरम अप्रैल माह के रूप में दर्ज किया गया था। यूरोपियन संघ की जलवायु एजेंसी कॉपरनिकस क्लाइमेट चेंज सर्विस के अनुसार—यह रिकॉर्ड उच्च तापमान का लगातार 11वाँ माह था, जो अल नीनो और मानवजनित जलवायु-परिवर्तन के संयुक्त प्रभाव का परिणाम था।

मालूम हो कि सन् 1850-1900 में जब औद्योगीकरण का शुभारंभ हुआ, उस समय वातावरण में इतनी अधिक ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन नहीं होता था। उस समय के तापमान की तुलना में अप्रैल, 2024 का माह 1.58 डिगरी अधिक गरम हो चुका है।

यूरोपियन यूनियन की क्लाइमेट मॉनिटरिंग सर्विस के वैज्ञानिकों के अनुसार इस वर्ष के शुरुआत में अल नीनो अपने उच्च स्तर पर चला गया था। मालूम हो कि अल नीनो एक प्राकृतिक घटना है, जिसके चलते तापमान घटता और बढ़ता रहता है। वहीं वातावरण में कैद ग्रीन हाउस गैसों की बढ़ती सांद्रता के कारण समुद्र व वायुमंडल में मौजूद अतिरिक्त ऊर्जा वैश्विक तापमान को नए रिकॉर्ड की ओर धकेलती है। माना जा रहा है कि इस तापमान वृद्धि के कारण विश्वभर में रिकॉर्ड सूखा, जंगलों में आग और बाढ़ जैसी घटनाएँ देखी जा रही हैं।

आश्चर्य नहीं कि अप्रैल माह के दौरान पूरे विश्व में बाढ़, सूखा, बारिश जैसी प्राकृतिक आपदाओं से जनजीवन बुरी तरह से प्रभावित रहा। इसका अर्थव्यवस्था पर दूरगामी प्रभाव भी विचारणीय है। जर्मनी के पॉट्सडैम इन्स्टीट्यूट फॉर क्लाइमेट इम्पैक्ट रिसर्च के वैज्ञानिकों के अध्ययन के अनुसार—जलवायु घटनाओं के प्रभाव से वैश्विक अर्थव्यवस्था को 2049 तक प्रतिवर्ष लगभग 380 खरब अमेरिकी डॉलर की हानि हो सकती है।

मई, 2024 के दौरान भारत में भीषण गरमी देखने को मिली, जिसमें अधिकतम और न्यूनतम तापमान दोनों ही अपनी सीमा को पार कर गए। मई के अंतिम सप्ताह में; विशेषकर 26-29 मई के बीच उत्तरी और मध्य भारत में भीषण गरमी का दौर देखने को मिला, जिसमें नई दिल्ली में रिकॉर्ड तापमान 49.9 डिगरी सेल्सियस तक पहुँच गया था।

वैज्ञानिकों की रिपोर्ट के अनुसार—मई, 2024 में जो ताप-लहर दर्ज की गई, वह शेष वर्षों की तुलना में डेढ़ सेल्सियस अधिक गरम रही। वैज्ञानिकों ने पाया कि इस बार जो ताप-लहर चली है, वह इनसानों की सहनशीलता से काफी अधिक होती जा रही है, जिसका प्रमुख कारण जीवाश्म ईंधनों का अधिक उपयोग है।

मई माह में 37 से अधिक शहरों का तापमान 45 डिगरी सेल्सियस से अधिक दर्ज किया गया। जिसके चलते गरमी से जुड़ी बीमारियों की चेतावनी जारी की गई; राष्ट्रीय राजधानी में बिजली की माँग अब तक के उच्चतम स्तर तक पहुँच गई; क्योंकि निवासियों को गरमी से निपटने के लिए एसी से लेकर पंखों व कूलर पर निर्भर रहने की अतिरिक्त आवश्यकता पड़ी।

वैज्ञानिकों का दावा था कि भारत में जिस तरह से ताप-लहर चली है, वह अब तक की सबसे अधिक गरम रही है। वैज्ञानिकों ने सन् 1979-2001 और 2001-2023 तापमान की तुलना की है। इन वर्षों की तुलना में वर्ष, 2024 में काफी अधिक गरमी पढ़ी है।

भारत में सबसे अधिक ताप-लहर, डेढ़ डिगरी सेल्सियस अधिक रही। फ्रेंच नेशनल सेंटर फॉर साइंटिफिक रिसर्च के आँकड़ों के अनुसार—भारत में तो तापमान 50 डिगरी सेल्सियस के करीब पहुँच गया था और इसको कम करने के लिए कोई तकनीकी समाधान दृष्टिगोचर नहीं हो रहा है। इसका मुख्य कारण कार्बन-डाइऑक्साइड का उत्सर्जन बताया जा रहा है।

इसे कम करने की मानवीय कोशिशें अवश्य की जानी चाहिए। जून माह के पूर्वार्द्ध में गरमी अपने चरम पर रही, जिसमें ताप-लहर कहर ढाती रही। आँकड़ों के अनुसार 1 मार्च से 20 जून के बीच पूरे भारत में ताप-लहर से मरने वालों की संख्या 143 तक बताई गई, जिसकी वास्तविक संख्या और अधिक हो सकती है।

अकेले दिल्ली में मरने वालों की संख्या 100 से अधिक रही। इसी के साथ 41,989 हीट स्ट्रोक के मामले दर्ज किए गए। इस तापमान वृद्धि के कारण भारतीय शहर एक तरह से हीट ट्रैप बन गए थे। हालाँकि प्री-मानसून बौछारों के साथ इस प्रलयंकारी गरमी से कुछ राहत अवश्य अनुभव की

गई, तथा ताप-लहर का पहिया जैसे कुछ थम-सा गया और लोगों ने राहत की साँस ली।

इस दौरान प्रचंड गरमी का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि बेचारे पक्षी आसमान में उड़ने के बजाय धरती पर आकर गिरते रहे। अस्पतालों में गरमी से प्रभावित लोगों की संख्या बढ़ती रही।

लोग आवश्यक कार्य से बाहर नहीं जा पाए। देश के कई हिस्सों में लोग पीने के पानी के लिए तरस गए। पहाड़ों में लोग मीलों दूर चलकर सूखते जलस्त्रोतों से पानी भरकर अपना निर्वाह करते रहे। साथ ही लोगों को बिजली की भारी किल्लत का सामना करना पड़ा।

आँकड़ों के अनुसार इस दौरान देशभर में 150 मुख्य जलाशयों में उपलब्ध जल-भंडारण क्षमता का मात्र 21 प्रतिशत जल ही शेष रह गया था। जून के तीसरे सप्ताह तक इन जलाशयों की कुल भंडारण क्षमता 37,662 बिलियन क्यूबिक मीटर थी; जबकि इन जलाशयों की कुल भंडारण क्षमता बीते वर्ष इसी दौरान 46,883 बीसीएम थी, जो भंडारण क्षमता में गिरावट को दरसाता है।

इस तरह वर्ष 2024 ने गरमी के पिछले सारे रिकार्ड तोड़ दिए। मई-जून में हर तरफ लू चलती दिखी। इसने बीते 73 वर्ष का रिकॉर्ड तोड़ दिया था। वर्ष 1951 के बाद 2024 में लू के सबसे लंबे मौसम का सामना करना पड़ा।

इसका एक कारण मानसून की सुस्ती भी रहा, लेकिन गरमी बढ़ने का मूल कारण कार्बन उत्सर्जन का बढ़ना है, जिसके चलते पृथ्वी का तापमान लगातार बढ़ रहा है, जिसका बुरा प्रभाव दोनों ध्रुवों पर पड़ रहा है। आर्कटिक ग्लेशियर 4 गुना अधिक तेजी से गरम हो रहे हैं, जिसके चलते समुद्री जलस्तर बढ़ रहा है। बढ़ती जनसंख्या व शहरीकरण निस्संदेह रूप में ग्लोबल वार्मिंग का एक बड़ा कारण माना जा सकता है; क्योंकि इनके कारण जंगलों का कटाव हो रहा है।

वायुमंडल में कार्बन-डाइऑक्साइड की मात्रा में वृद्धि हो रही है। इनके साथ विश्वभर के मौसम चक्र में अप्रत्याशित बदलाव देखने को मिल रहे हैं। कहीं सूखा पड़ रहा है तो कहीं पर तबाही मचा देने वाली बारिश हो रही है। इसके साथ जैव-विविधता की स्थिति बिगड़ रही है, कृषि के साथ जनजीवन पर बुरा प्रभाव पड़ रहा है। ऐसे में हमें पर्यावरण के प्रति जागरूक होने की आवश्कता है।

वर्ष, 2024 की गरमी की लहर एक चेतावनी के रूप में भी हमारे समक्ष है कि जलवायु संकट के समाधान के लिए तात्कालिक एवं सतत प्रयासों में गंभीरता लाने की आवश्यकता है; क्योंकि हमारा अस्तित्व संतुलित एवं अनुकूल पर्यावरण पर टिका हुआ है। ❑

अखण्ड ज्योति पत्रिका हेतु बैंक खातों का विवरण

जमा रसीद की प्रति एवं विवरण ई-मेल, पत्र द्वारा भेजें; अन्यथा राशि का समायोजन नहीं हो पाएगा।

Beneficiary –	Akhand Jyoti Sansthan	I.F.S. Code	Account No.
S.B.I.	Ghiya Mandi Mathura	SBIN0031010	51034880021
P.N.B.	Chowki Bagh Bahadur, Mathura	PUNB-0183800	1838002102224070
I.O.B.	Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura	IOBA0001441	144102000000006

विदेशी धन बैंक में सीधे जमा न करें, ड्राफ्ट द्वारा भेजें।

परमानंद की अवस्था है योगावस्था

योगसूत्र 1.2 में योग को प्रकाशित व परिभाषित करते हुए ऋषिवर पतंजलि ने कहा है— **योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः** ' अर्थात चित्त की वृत्तियों का निरोध ही योग है। चित्त की वृत्तियों के निरोध से तात्पर्य चित्त की वृत्तियों के सर्वथा रुक जाने से है। जब चित्त की वृत्तियों का निरोध हो जाता है, तभी साधक के भीतर योग घटित होता है।

योग घटित होने का आशय है कि चित्तवृत्तियों का निरोध होते ही उस समय द्रष्टा (आत्मा) की अपने स्वरूप में स्थिति हो जाती है। आत्मा की अपने स्वरूप में स्थिति से तात्पर्य है कि आत्मा अपने वास्तविक सच्चिदानंदस्वरूप को जान लेती है, पहचान लेती है और उसी स्वरूप में वह अवस्थित हो जाती है। **अहं ब्रह्मास्मि** (मैं ब्रह्म हूँ), **अयमात्मा ब्रह्म** (यह आत्मा ही ब्रह्म है) की अनुभूति आत्मा को होती है।

यह स्थिति, यह अनुभूति ही योग है, समाधि है, मोक्ष है, आत्मसाक्षात्कार है, ब्रह्मसाक्षात्कार है। इस स्थिति में साधक सभी प्रकार के द्वंद्वों, दुःखों, बंधनों से मुक्त होकर परमानंद, ब्रह्मानंद की अवस्था को प्राप्त हो जाता है। इस अवस्था में जीव और ब्रह्म का भेद मिट जाता है और जीव ब्रह्म में विलीन हो जाता है। जीव ब्रह्म के साथ एकाकार हो जाता है।

ब्रह्म आनंदमय है, इसलिए यह योगावस्था, मोक्षावस्था भी आनंदमय है। ब्रह्म का साक्षात्कार ही मानव जीवन का चरम लक्ष्य है। ब्रह्मसाक्षात्कार होने पर ही साधक को शाश्वत सुख, ब्रह्म सुख की प्राप्ति होती है और वह सभी प्रकार के दुःखों, द्वंद्वों, कर्मसंस्कारों व जन्म-मरण के बंधन से मुक्त हो जाता है।

ब्रह्मसाक्षात्कार हो जाने पर साधक संसार में रहता है, पर संसार उसमें नहीं रहता। वह निर्विकार, निर्दोष, निर्द्वंद्व, निर्भार और निर्भय हो जाता है। उसे यह संसार भी ब्रह्म की ही अभिव्यक्ति के रूप में जान पड़ता है और वह संसार में ब्रह्मभाव में रहता हुआ, ब्रह्मदृष्टि से संसार को देखता हुआ, जानता हुआ, अनुभव करता हुआ तदनुरूप लोक-व्यवहार करता है।

वह कर्म करता है, पर हर कर्म को ब्रह्मदृष्टि से करता है और उसे ब्रह्म (ईश्वर) को ही अर्पण करता जाता है। इसलिए उसका कर्म भी अकर्म होता जाता है। आत्मा के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान ही, अनुभूति ही योग है, मोक्ष है, मुक्ति है, समाधि है, निर्वाण है, कैवल्य है। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि जब आत्मा स्वभावतः नित्य, मुक्त, शुद्ध चैतन्य और ब्रह्म का अंश है तो फिर आत्मा बंधन में क्यों और कैसे पड़ती है? 'मैं ब्रह्म हूँ,' या 'आत्मा ही ब्रह्म है' इसकी अनुभूति जीवात्मा को स्वतः ही क्यों नहीं होती?

यह सत्य है कि आत्मा नित्य, मुक्त, शुद्ध चैतन्य, अविनाशी और ब्रह्म का अंश है। सच पूछा जाए तो आत्मा बंधन में नहीं पड़ती है, बल्कि उसे बंधन में होने का भ्रम हो जाता है। आत्मा अकर्त्ता है, क्योंकि वह प्रकृति और उसके व्यापारों की द्रष्टा मात्र है। चैतन्य उसका स्वभाव है। सांख्य दर्शन के अनुसार पुरुष (आत्मा) और प्रकृति के आकस्मिक संबंध से बंधन का प्रादुर्भाव होता है।

पुरुष (आत्मा) बुद्धि, अहंकार और मन से भिन्न है, परंतु अज्ञान के कारण वह अपने को उन वस्तुओं से पृथक नहीं समझ पाता है।

इसके विपरीत वह स्वयं को बुद्धि या मन से अभिन्न समझने लगता है। सुख और दु:ख बुद्धि या मन में समाविष्ट होते हैं। अस्तु पुरुष (आत्मा), जीवात्मा, अपने को बुद्धि या मन से अभिन्न समझकर दु:खों का अनुभव करता है। इसकी व्याख्या एक उपमा से की जा सकती है। जिस प्रकार एक सफेद, पारदर्शी स्फटिक; लाल पुष्प की निकटता से लाल दिखाई देता है, उसी प्रकार नित्य और मुक्त आत्मा, जीवात्मा पुरुष अपने को शरीर, बुद्धि, अहंकार, मन तथा इंद्रियों से युक्त समझने लगता है तथा सुख-दु:ख की अनुभूति स्वयं करने लगता है।

जिस प्रकार एक पिता अपने पुत्र की सफलता और अपने पुत्र के सुख को देखकर सुखी होता है और अपने पुत्र की असफलता और दु:ख से दु:खी होता है; वैसे ही शरीर, मन, बुद्धि, अहंकार और इंद्रियों से तादात्म्य स्थापित कर लेने के कारण शरीर और मन के सुख-दु:ख को जीवात्मा स्वयं का सुख-दु:ख समझने लगती है। यही बंधन है और यही दु:ख का कारण है।

माया, भ्रम, अज्ञान, अविद्या के वशीभूत होकर आत्मा बंधनग्रस्त हो जाती है और अपने वास्तविक सच्चिदानंदस्वरूप को भूल जाती है और फलस्वरूप तब तक द्रष्टा, जीवात्मा अपने चित्त की वृत्ति के अनुरूप ही अपना स्वरूप समझती रहती है और उसे अपने वास्तविक स्वरूप का ज्ञान नहीं होता और वह दु:ख और बंधन से ग्रसित हो जाती है और दु:ख पाती है, जीवन और मरण के चक्र में पड़ी रहती है। इसलिए चित्तवृत्तिनिरोधरूप योग मनुष्य का परम कर्त्तव्य है।

'**चित्त की वृत्तियों का निरोध**' का मतलब है चित्त की चंचलता, चपलता का पूर्णरूपेण अंत हो जाना। चित्त का प्रयोग सामान्य तौर पर 'मन' के लिए किया जाता है जबकि मन, बुद्धि और अहंकार का समुच्चय चित्त है। ये अत्यंत ही चंचल है। अत: स्वरूप बोध के लिए इसका निरोध अत्यंत ही आवश्यक है।

चित्त की वृत्तियों का मतलब है चित्त अथवा मन में उठने वाली अच्छे-बुरे, शुभ-अशुभ संस्कारों, स्मृतियों, कामनाओं, वासनाओं, इच्छाओं, विचारों की लहरें। मन में उठने वाले संकल्प-विकल्प की लहरें ही वृत्तियाँ हैं। मन में उठ रही इन लहरों का सदैव के लिए मिट जाना ही चित्त की वृत्तियों का निरोध है।

जब तक चित्त में, मन में ये लहरें उठ रही हैं तब तक द्रष्टा, जीवात्मा को अपने वास्तविक सच्चिदानंदस्वरूप का बोध नहीं हो सकता। जैसे जब तक समुद्र में तेज लहरें उठ रही हैं, तब तक आकाश में उगे हुए पूर्ण चंद्रमा का प्रतिबिंब समुद्र में स्थिर नहीं हो सकता; क्योंकि लहरें उसे स्थिर होने या टिकने ही नहीं देतीं, पर समुद्र की लहरों के शांत होते ही आकाश के चंद्रमा का पूर्ण प्रतिबिंब समुद्र के अंदर भी पूर्णरूपेण स्थिर दिखाई पड़ने लगता है और तब उसे देखकर, उसके सौंदर्य को देखकर मन आह्लादित हो उठता है।

वैसे ही जब योग साधनों के निरंतर अभ्यास से चित्त में, मन में उठ रही लहरें पूर्णरूपेण मिट जाती हैं, तब मन निर्मल हो जाता है, मन मिट जाता है, मन अ-मन हो जाता है तब द्रष्टा को स्वरूप बोध होता है। चित्त की वृत्तियों का निरोध ज्ञान, कर्म, भक्ति आदि योग साधनों के निरंतर अभ्यास से ही संभव हो पाता है।

ज्ञान, कर्म, भक्ति, स्वाध्याय, जप, तप, ध्यान, अभ्यास-वैराग्य आदि योग साधनों से ही चित्त की वृत्तियों का निरोध होता है और आत्मा पर चढ़े हुए अज्ञान, अविद्या, माया, भ्रम के आवरण मिट जाते

हैं तथा जीवात्मा को अपने शुद्ध चैतन्य स्वरूप का बोध होता है।

जब तक आकाश बादलों से आच्छादित रहता है तब तक सूर्य का प्रकाश छिपा रहता है, पर आकाश में आच्छादित बादलों के छँटते ही पूरा आकाश सूर्य के प्रकाश से जगमगा उठता है। वैसे ही आत्मा पर छाए अज्ञान, अविद्या, माया, भ्रम के आवरण के छँटते ही आत्मा अपने शुद्ध, चैतन्यस्वरूप को प्राप्त कर लेती है।

यह अवस्था ही योग की अवस्था है। यह सुख-दुःख से परे परमानंद, ब्रह्मानंद की अवस्था है। अद्वैत वेदांत के अनुसार यह जीव और ब्रह्म, आत्मा और ब्रह्म की अभिन्नता, एकता और अद्वैतता के ज्ञानबोध की अवस्था है। ❑

आजीवन सदस्य कृपया ध्यान दें

यह सूचना गत 11 मास से निरंतर जा रही है, इसका उत्तर नहीं मिल रहा है। समझा जा सकता है कि या तो पाठकों की इसमें रुचि नहीं है अथवा अन्य कोई कारण है। अतः आगामी मास से पुराने आजीवन सदस्यों (जिनका संदेश नहीं आया है) की अखण्ड ज्योति भेजना बंद किया जा रहा है।

आपने जब आजीवन सदस्यता स्वीकार की थी, तब से अब तक महँगाई इतनी अधिक बढ़ चुकी है कि पत्रिका की आजीवन सदस्यता का निर्वहन कर पाना कठिन हो रहा है। अब पूर्व की सुरक्षानिधि में आजीवन सदस्यता बनाए रखना संभव नहीं जान पड़ता। जो सदस्य रुपये 150 (सन् 1982) में बने थे, उन्हें अभी तक पत्रिका भेजी जा रही है; जबकि वार्षिक चंदा रुपये 15 (सन् 1982) से बढ़कर रुपये 300 हो गया है—भविष्य में और बढ़ता रहेगा। ऐसी स्थिति में आजीवन सदस्यता को पुरानी शर्तों पर जारी नहीं रखा जा सकेगा।

अब नई व्यवस्था के अनुसार आजीवन सदस्यता 20 वर्ष तक सीमित रहेगी। उसका अब चंदा रुपये 6000/- होगा। हम सबकी यही अपेक्षा है कि जो श्रद्धा-स्नेह का संबंध लंबे समय से बना हुआ है, वह और भी प्रगाढ़ होगा। अखण्ड ज्योति का आलोक आपको एवं अन्य परिजनों को आलोकित करता रहेगा।

इसके लिए हम आपके समक्ष निम्न विकल्प प्रस्तुत कर रहे हैं—

(1) आपका आजीवन शुल्क जो भी जमा है, उसे काटकर शेष रुपया और भेज दें, ताकि आपकी आजीवन सदस्यता (20 वर्षीय) बनी रहे। राशि बैंक ड्राफ्ट/चैक/RTGS/NEFT से भेजी जा सकती है। **राशि भेजने के लिए बैंकों का विवरण पत्रिका में पृष्ठ सं. 07 पर दिया गया है।**

(2) आपकी आजीवन सदस्यता समाप्त कर दी जाए एवं जमा सुरक्षानिधि वार्षिक चंदा में ट्रांसफर कर दी जाए। उस राशि से वार्षिक चंदा रुपये 300/- के हिसाब से जब तक का चंदा बने अखण्ड ज्योति भेज दी जाए।

(3) यदि किन्हीं कारणोंवश ऐसा संभव न हो पा रहा हो तो अपने बैंक खाते की जानकारी भेजने का अनुग्रह करें, जिससे आपको राशि वापस भेजी जा सके। विवरण मिलने पर आपके खाते में सीधे रुपया भेज दिया जाएगा।

पत्र व्यवहार में अपनी सदस्य संख्या, नाम, पता, फोन नंबर, ई-मेल का उल्लेख अवश्य करें।

आप सबको पत्र द्वारा सूचित किया जा चुका है, संभव है किसी कारणवश पत्र न मिला हो। अपनी सहमति का पत्र डाक/ई-मेल द्वारा भेजने का अनुग्रह करें।

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

आप को सादर प्रणाम

Shantikunj Rishi Chintan के विडियो को अपने मित्रों के साथ शेयर जरूर करें।

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel के वीडियो युग निर्माण मिशन के लिए समर्पित है! हमारा एकमात्र उद्देश्य परम पूज्य गुरुदेव के विचारों को जन-जन तक पहुंचाने का है।

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

आप भी हमारे साथ जुड़ कर इस विचार क्रांति योजना में सहभागी अवश्य बनें।

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

धन्यवाद

☞ शांतिकुंज हरिद्वार के Official WhatsApp Channel awgpofficial Shantikunj चैनल को Follow करने के लिए Link पर Click करें https://whatsapp.com/channel/0029VaBQpZm6hENhqlhg453J

Shantikunj WhatsApp:- शांतिकुंज की गतिविधियों से जुड़ने के लिए 8439014110 पर अपना नाम लिख कर WhatsApp करें

All World Gayatri Pariwar Official Social Media Platform

Official Facebook Page:- https://www.facebook.com/awgpofficial

Official Twitter:- https://twitter.com/awgpofficial

https://twitter.com/DrChinmayP

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

Official Instagram:- https://www.instagram.com/awgpofficial

Official Telegram:- https://t.me/awgpofficial

https://t.me/shantikunjrishichintan

https://t.me/awgpofficialgroup

Youtube Channel:- https://www.youtube.com/c/RishiChintan

https://www.youtube.com/c/shantikunjvideo

AWGP Official Website:- http://www.awgp.org/

http://literature.awgp.org

जगाएँ विश्वास और बदलें जमाना

आत्मविश्वास जीवन में आगे बढ़ने का गुरुमंत्र है, सहारा है। इसके अभाव में समस्त साधन एवं परिस्थितियों की अनुकूलता होते हुए भी आगे नहीं बढ़ा जा सकता। वास्तव में आत्मविश्वास के समान कोई दूसरा मित्र नहीं और आत्मविश्वास ही जीवन में उन्नति एवं उत्कर्ष की प्रथम सीढ़ी है।

आत्मविश्वास ही सफलता का मुख्य रहस्य है। आत्मविश्वास की मात्रा जितनी अधिक होगी, हमारा संबंध अनंत जीवन और अनंत शक्ति से उतना ही गहरा होता जाएगा। जब चारों ओर विपत्तियों के काले बादल मँडरा रहे होंगे, जब सागर में कहीं भी जीवन नैया को खड़ा करने का किनारा न मिल रहा होगा, भयंकर तूफान उठ रहे होंगे, नाव अब डूबे कि तब की स्थिति होगी, तो ऐसी स्थिति में आत्मविश्वास ही बचा सकता है। ऐसी स्थिति में आत्मविश्वास ही वह शक्ति है, जो सहस्रों विपत्तियों का सामना करते हुए पथिक को मंजिल तक पहुँचा सकता है।

कोलंबस इसी आत्मविश्वास के साथ पृथ्वी की परिक्रमा करते हुए भारत की खोज में निकल पड़ता है, एडमंड हिलेरी और तेंजिंग नोर्गे इसी आत्मविश्वास के बल पर विश्व के सबसे ऊँचे शिखर एवरेस्ट पर विजय पताका फहराते हैं। इसी आत्मविश्वास के आधार पर मनुष्य ने चंद्रमा पर कदम रखे और आगे मंगल से लेकर सूर्य की ओर बढ़ते हुए अनंत आकाश की खोज में बढ़ रहा है। सागर की अतल गहराइयों को वह इसी के बल पर नाप रहा है।

नेपोलियन की सेना जब आल्प्स पर्वत देखकर रुक गई थी और सेनापतियों को कोई मार्ग नहीं सूझ रहा था, तो इस दुर्भेद्य स्थिति में भी नेपोलियन का अथाह आत्मविश्वास ही था, जिसने थक चुकी सेना के सिपाहियों से कहा कि विश्वास करो कि आल्प्स है ही नहीं और कुछ भी हो, हमें आल्प्स को पार करना है। देखते-ही-देखते विशाल पहाड़ को काट-छाँटकर मार्ग बन गया और पूरी सेना उसके पार हो गई।

भगवान राम अपने अपराजेय आत्मविश्वास के बल पर ही वनवास की विपत्तियों को सहते हुए, लंकापति रावण से लोहा ले पाए और सीता माता को वापस ला पाए। भगवान श्रीकृष्ण ने इसी आत्मविश्वास के बल पर विषमता के अनंत चक्रव्यूह को पग-पग पर ध्वस्त करते हुए रणक्षेत्र में गीता के अमर संदेश के साथ जीवन जीने की राह सुझाई है।

वास्तव में जीवन के समर में शुभारंभ स्वयं पर विश्वास से करना होता है। छोटे-छोटे सफल कदमों के साथ आगे बढ़ते हुए यह विश्वास जाग्रत होता है और हृदय शक्ति से भरता जाता है। इसके लिए हमें स्वयं से प्यार करना सीखना होगा, स्वयं का सम्मान करना होगा। यदि कोई साथ न दे तो आत्मविश्वास के सहारे अकेले आगे बढ़ने का साहस करना होगा।

किसी ने सही ही कहा है कि बेखटके अकेले रहो। अपना आदर आप करो और देखो कि तुम्हारी आत्मा की क्या दशा है। जिसके हृदय में यह ज्ञान प्रकाशित है, यह बोध जाग्रत है, वह अपनी संपूर्ण शक्तियों को एक केंद्रबिंदु पर टिकाते हुए आश्चर्यजनक ढंग से जीवन में उत्कर्ष के नित नए मुकामों को प्राप्त करता है।

आत्मविश्वास का अर्थ है, अपनी परिस्थितियों और समस्याओं का हल अपने आप में ढूँढ़ना। स्वयं में निहित अंत:शक्तियों पर अकूत विश्वास करना और इनके बल पर अपनी संकल्प सृष्टि के निर्माण में जुट जाना।

वास्तव में यह दृढ़ इच्छाशक्ति का पर्याय है, जो जीवन में अथक श्रम एवं अनुशासन की माँग करता है तथा एक सुनियोजित रणनीति के साथ अपार धैर्य एवं अध्यवसाय के संग आगे बढ़ना संभव बनाता है।

आत्मविश्वास का मूल स्वरूप है—आत्मसत्ता पर विश्वास करना। इसी दैवी विश्वास के आधार पर लोकमान्य तिलक कहते हैं कि स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और हम उसे लेकर रहेंगे। इसी के बल पर लिंकन कहते हैं कि मैंने अपने भगवान को यह वचन दिया है कि दासों की मुक्ति के कार्य को मैं अवश्य पूरा करूँगा। वास्तव में यही विश्वास जीवन की शक्ति है।

इस विश्वास के साथ व्यक्ति क्या नहीं कर सकता। विश्वास हमारे लिए अथाह सागर में भी मार्ग ढूँढ़ निकालता है। वह हमें गगनचुंबी पर्वत-शिखरों को लाँघने की शक्ति और प्रेरणा देता है। विश्वास ही जीवन के उस मार्ग की खोज करता है, जो हमें मंजिल तक पहुँचा सके।

विश्वास ही हमारी जीवन नैया को तूफानी सागर में खेता है। विश्वास पर्वतों को डिगा देता है। विशाल सागर को लाँघ सकता है। विश्वास कोई कोमल पुष्प नहीं, जो साधारण वायु के झोंके से ही गिर जाए। वह हिमालय की तरह अडिग, अविचल एवं अपराजेय रहता है।

सीता माता की खोज में जब सब हिम्मत हार बैठते हैं और आशा खो बैठते हैं, तो जामवंत जी, हनुमान जी के आत्मविश्वास को जगाते हैं कि तुम इस समुद्र को लाँघ सकते हो। आत्मविश्वास जाग्रत होते ही हनुमान जी उस सागर को खेल की तरह पार कर जाते हैं। यही हर व्यक्ति की कहानी है।

सुप्तावस्था में पड़ा आत्मविश्वास परिस्थितियों के थपेड़ों के बीच जाग्रत होकर चेतनता को प्राप्त होता है, जिसके सहारे फिर वह कुछ भी कर सकता है। वस्तुत: संसार के समरांगण में, जीवन संघर्ष के बीच वही व्यक्ति स्थिर रह सकता है, तमाम बाधाओं को चीरते हुए आगे बढ़ सकता है, जिसमें अदम्य विश्वास है तथा ईश्वरीय न्याय विधान पर अटल आस्था है। हर सफलता की यात्रा का शुभारंभ स्वयं पर विश्वास के साथ ही करना होता है, लेकिन यहाँ विश्वास और अहंकार में भेद समझना भी आवश्यक हो जाता है।

स्वामी रामतीर्थ के शब्दों में विश्वास राम भी है और रावण भी। आत्मनिष्ठा पर केंद्रित विश्वास राम है, तो अहंकार पर आधारित विश्वास रावण। महर्षि वसिष्ठ के अनुसार विश्वास कुलरानी है, तो अहंकार बाजारू वेश्या। जहाँ एक स्त्री सेवा करती हुई परमार्थ में जीवन व्यतीत करती है, तो दूसरी स्वयं डूबती है और साथ में दूसरों को भी ले डुबाती है।

अहंकारप्रेरित विश्वास विनाश, शोषण, पीड़ा, निर्दयता का कारण बनता है। पश्चिमी संदर्भ में हिटलर, मुसोलिनी, सिकंदर जैसे तानाशाहों और भारत में रावण, हिरण्याक्ष, कंस जैसे दैत्यों में विश्वास कम नहीं था, किंतु वह अहंकार पर आधारित था। अत: वे स्वयं के साथ अपने समुदाय के विनाश का भी कारण बने।

हमें इस तरह के अहंकार के बजाय आत्मनिष्ठा पर आधारित विश्वास को जगाना है, और अपने गुरु की इच्छा एवं ईश्वर के आदेश के अनुरूप लोकसेवा एवं जनकल्याण के निमित्त अपनी क्षमताओं का उपयोग करना है तथा ईश्वर की इस सृष्टि को सुंदर तथा समुन्नत बनाने में अपना भाव भरा योगदान देना है। इसी में जीवन की सफलता एवं सार्थकता का मर्म छिपा हुआ है। ❑

वैश्विक त्योहार है दीपावली

दीपावली भारतवर्ष का एक प्रमुख त्योहार है, जिसे भारत में प्राय: सभी धर्म के लोग मनाते हैं। उत्तरी भारत में यह भगवान श्रीराम द्वारा रावण पर विजय के उपरांत अयोध्या आगमन की खुशी में दीपपर्व के रूप में मनाया जाता है। दक्षिण भारत में भगवान श्रीकृष्ण द्वारा नरकासुर पर विजय के रूप में इसे मनाया जाता है। पश्चिमी भारत में भगवान विष्णु द्वारा असुर सम्राट बलि को पाताल भेजने के रूप में मनाया जाता है।

भारत में यह उत्सव पूरे 5 दिन मनाया जाता है यथा धनतेरस, नरक चतुर्दशी या छोटी दीपावली, लक्ष्मी पूजन के साथ दीपावली, गोवर्धन पूजा और अंत में भाईदूज के साथ इसका समापन होता है।

आज दीपावली का आलोक भारत तक सीमित नहीं, पूरे विश्व में फैल चुका है, जहाँ इसे हर्षोल्लास एवं धूम-धाम के साथ मनाया जा रहा है। प्रस्तुत हैं इससे जुड़ी कुछ रोचक जानकारियाँ।

भारत के पड़ोसी देश श्रीलंका में दीपावली भारी उत्सव के वातावरण में मनाई जाती है। भारत के साथ श्रीलंका की समीपता तथा दीपावली उत्सव के मूल से इसके जुड़ाव के चलते यह स्वाभाविक भी है। यहाँ तमिल समुदाय के लोग इस दिन तेल स्नान के बाद नए वस्त्र धारण करते हैं और पूजा कर बड़ों का आशीर्वाद लेते हैं तथा शाम को आतिशबाजी करते हैं।

पड़ोसी देश नेपाल में दीपावली को तिहार के नाम से बड़े उत्साह के साथ मनाया जाता है। नेपाल चूँकि भारत का पड़ोसी देश है, सांस्कृतिक रूप से जुड़ा हुआ है, अत: दीपावली के सांस्कृतिक उल्लास का संचार वहाँ भारत जैसा ही रहता है।

भारत की तरह नेपाल में भी दीपावली का पर्व 5 दिन तक मनाया जाता है, हालाँकि परंपरा में थोड़ी भिन्नता अवश्य रहती है। यहाँ पहले दिन कौए को तथा दूसरे दिन कुत्ते को भोग लगाया जाता है। तीसरे दिन गोमाता और लक्ष्मी की पूजा होती है। इसी दिन से नेपाली संवत् प्रारंभ होता है। इसलिए व्यापारी इसे शुभ मानते हैं। चौथा दिन नववर्ष के रूप में मनाया जाता है, इस दिन महापूजा होती है। पाँचवें दिन भाई टीका होता है, जब बहनें भाइयों का तिलक करती हैं।

सिंगापुर के लघु भारत में दीपावली के उल्लास को अपने चरम पर देखा जा सकता है। यहाँ पर तरह-तरह की रंगोलियाँ, व्यापक साज-सज्जा और उत्सवमयी माहौल देखने लायक रहता है। यहाँ के चीनी आबादी वाले इलाके तक में इसके आलोक को देखा जा सकता है। वस्तुत: प्रकाश पर्व अब सिंगापुर की सांस्कृतिक पहचान में शामिल हो चुका है।

सिंगापुर में इस दिन सरकारी अवकाश रहता है और खरीदारी के लिए विशेष मेट्रो की व्यवस्था रहती है। ऐसा वातावरण रहता है, जैसे कि मिनी भारत में दीपावली मनाई जा रही हो। इसके साथ वहाँ दीपों की जगमगाहट के बीच भारत के राष्ट्रीय पक्षी मोर के आकर्षक रूप का उपयोग सर्वत्र किया जाता है।

इंडोनेशिया में हालाँकि भारतीयों की बड़ी आबादी नहीं है, फिर भी दीपावली यहाँ एक बड़ा

उत्सव रहता है। भारत में किए जाने वाले सारे कर्मकांड यहाँ भी मनाए जाते हैं और ये दर्शनीय रहते हैं।

थाईलैंड में दीपावली लुई क्रथोंग के नाम से मनाई जाती है, जिसमें केले के पत्तों से दीए बनाए जाते हैं। हजारों दीप नदी में छोड़े जाते हैं और दीप-उत्सव का यह दृश्य अत्यंत मनोहर रहता है।

मलयेशिया में जहाँ मलय लोगों का सामंजस्यपूर्ण बहुजातीय मिश्रण देखने को मिलता है, वहाँ भारतीयों की आबादी 8 प्रतिशत है। यहाँ हरि दीपावली के रूप में इसे मनाया जाता है, जिसकी पूजा भारत से थोड़ी भिन्नता लिए रहती है। दिन का शुभारंभ तेल स्नान से होता है, फिर विभिन्न मंदिरों में पूजा की जाती है।

चूँकि आतिशबाजी की यहाँ मनाही रहती है, अतः उपहारों, मिठाइयों व शुभकामनाओं के आदान-प्रदान के साथ इसे मनाया जाता है। दीपावली की अवधि के दौरान यहाँ शैडो पपेट अर्थात छाया कठपुतली खेल बड़ी मात्रा में दिखाया जाता है, जिसमें रामायण एवं महाभारत की कथाओं का मंचन किया जाता है।

फिजी में भारतीयों की बड़ी संख्या (38 प्रतिशत) होने के चलते यहाँ दीपावली का पर्व बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता है। इस दिन सार्वजनिक छुट्टी रहती है, स्कूल-कॉलेज बंद रहते हैं और लोग उपहारों का आदान-प्रदान करते हैं तथा बड़े स्तर पर इस पर्व को मनाते हैं। नादी नगर परिसर में दीपों की जगमगाहट की एक विशिष्ट प्रतियोगिता होती है, जिसका शुभारंभ फिजी के प्रधानमंत्री के हाथों दीप-प्रज्वलन के साथ किया जाता है।

मॉरीशस की लगभग आधी आबादी भारतीय है। अतः यहाँ दीपावली पूरे उल्लास के साथ मनाई जाती है और यहाँ भी इस दिन सार्वजनिक अवकाश रहता है। यहाँ के खूबसूरत द्वीप त्रिओलेट में, जहाँ हिंदुओं की बहुतायत है, भारत की तरह पटाखों, चमकदार रोशनी से सजे घरों तथा मित्रों व पारिवारिक मिलन के साथ उत्सव को मनाया जाता है।

त्रिनिदाद एवं टोबेगो के कैरेबियन टापुओं में दीपावली रामायण के मंचन के साथ बड़े हर्ष-उल्लास के साथ मनाई जाती है। मालूम हो कि कैरबियाई टापू त्रिनिदाद और टोबेगो में एक-चौथाई भारतीय मूल के लोग रहते हैं। त्रिनिदाद में सन् 1845 में भारतवंशियों की पहली टुकड़ी पहुँची थी, उसी वर्ष से यहाँ दीपावली का उत्सव मनाया जा रहा है।

दोनों टापुओं में इस दौरान राष्ट्रीय अवकाश रहता है। यहाँ के किसी भी छोटे-बड़े शहर का दीपावली पर नजारा भारत के किसी गाँव की तरह रहता है, जब यहाँ के प्रवासी भारतीय, घरों में तेल के दीए जलाते हैं। एक साथ प्रकाशमान दीयों का दृश्य अद्‌भुत रहता है। आश्चर्य नहीं कि त्रिनिदाद की राजधानी पोर्ट ऑफ स्पेन शहर में एक बड़े चौराहे का नाम ही दीवाली स्ट्रीट रखा गया है।

दक्षिण अमेरिका के छोटे से देश गुयाना में सन् 1853 से मिठाइयों के पारंपरिक आदान-प्रदान, परिवार तथा मित्रों से मिलने, घरों को रंगीन रोशनियों से प्रकाशित करने के साथ दीपावली मनाने की परंपरा रही है। इस उपलक्ष्य पर रोशनी से सजे काफिले शहरों से गुजरते हैं, जिनको देखने के लिए हजारों लोग इकट्ठा होते हैं।

कनाडा को पंजाबियों की बड़ी आबादी के कारण मिनी पंजाब भी कहा जाता है और पंजाबी यहाँ की तीसरी राजकीय भाषा है। आश्चर्य नहीं कि यहाँ दीपावली हर्षोल्लास के साथ मनाई जाती है। यहाँ के ओंटेरियो में मध्य अक्टूबर से नवंबर तक दीपावली मनाई जाती है और ब्रैम्पटन व पंजाबी बहुल शहरों में भी शानदार तरीके से दीपावली का आयोजन किया जाता है।

अमेरिका में जॉर्ज बुश के समय में व्हाइट हाउस में वर्ष 2003 से दीपावली मनाने की प्रथा

आरंभ हुई। इसके बाद बराक ओबामा से लेकर डोनाल्ड ट्रंप और जो बाइडन के काल में भी दीपावली का पर्व हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता रहा है।

अमेरिका का पेंसिल्वेनिया दीपावली को आधिकारिक अवकाश घोषित करने वाला पहला राज्य है, अब न्यूयॉर्क में भी ऐसा निर्णय लिया गया है। इंग्लैंड में भी भारतीय घरों में दीपावली धूम-धाम से मनाई जाती है। पारंपरिक वेशभूषा एवं वाद्ययंत्रों के साथ यहाँ शोभायात्रा निकाली जाती है।

यहाँ के विश्वविद्यालयों में भारतीय छात्र बड़ी मात्रा में दीपावली मनाया करते हैं। यहाँ के बर्मिंघम और लेस्टर शहरों में बड़े स्तर पर दीपावली मनाई जाती है, जहाँ बड़ी संख्या में भारतीय आबादी बसी है। स्थानीय आबादी भी इसमें बढ़-चढ़कर भाग लेती है।

लेस्टर में मुख्य सड़क पर उत्सव की रोशनी जलाकर दीपावली को मनाया जाता है एवं सड़क के इस भाग को गोल्डन माइल के नाम से जाना जाता है। पिछले वर्ष यहाँ की संसद में भी दीपावली मनाई गई थी और तात्कालिक प्रधानमंत्री ने अपने वीडियो संदेश से भारतीय समुदाय को दीपावली की शुभकामनाएँ दी थीं।

ऑस्ट्रेलिया में भी दीपावली की धूम रहती है और मेलबोर्न में श्री शिव-विष्णु मंदिर में दीपावली की रौनक देखते ही बनती है। न्यूजीलैंड में भी भारतीय प्रकाश पर्व को भव्य रूप में मनाया जाता है। दोनों देशों में इस दिन सार्वजनिक अवकाश रहता है।

न्यूजीलैंड की राजधानी के नगर ऑकलैंड और वेलिंग्टन में दीपावली से दो सप्ताह पूर्व दीपावली मेला मनाया जाता है; जिसका उद्घाटन स्वयं प्रधानमंत्री दीप प्रज्वलन के साथ करते हैं, जिसमें भारतीय नृत्य, कर्नाटकी संगीत, हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत, रंगोली कार्यशाला आदि विविध सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं।

संयुक्त अरब अमीरात व दुबई में भी दीपावली को हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। वर्ष 2018 से यहाँ आतिशबाजी को भी स्वीकृति मिल गई है। पाकिस्तान में हिंदुओं को भले ही दोयम दरजे का नागरिक माना जाता रहा हो, लेकिन दीपावली का पर्व यहाँ भी धूम-धाम से मनाया जाता है।

दक्षिण अफ्रीकी देश के मॉरीशस में भारतवंशी विधिविधान से लक्ष्मी पूजन करते हैं और भारत के विपरीत यहाँ मिठाइयाँ घरों में ही पकाने की परंपरा है और खास बात यह है कि दीपावली पर भारतवंशी परंपरागत भारतीय वेशभूषा में ही सज-धजकर तैयार होते हैं।

दक्षिण अफ्रीका में भारतीय समुदाय बहुल इलाकों जैसे जोहांसबर्ग के निकट लेनासिया, चेट्सवर्थ और डरबन के फोनेक्स में दीपावली बहुत ही भव्य तरीके से मनाई जाती है। यहाँ दक्षिण भारतीय मूल के नागरिक अधिक हैं, जो मिठाइयाँ, दीए और उपहार खरीदकर एक स्थान पर एकत्रित होकर उत्सव मनाते हैं।

इस तरह दीपावली का प्रकाशपर्व आज एक वैश्विक त्योहार बन चुका है। बुराई पर अच्छाई, अंधकार पर प्रकाश और अज्ञान पर ज्ञान की विजय का यह पर्व शांति, सद्भाव एवं सौहार्द का सार्वभौम संदेश लिए हुए है, जिसकी आज के सांस्कृतिक संकट से गुजर रहे ग्लोबल विश्व में विशेष आवश्यकता है। इसमें जहाँ **तमसो मा ज्योतिर्गमय** का प्रकाशपूर्ण संदेश विद्यमान है तो वहीं देव संस्कृति की जड़ों से जुड़ने का दिव्यभाव भी, जिसकी आज बड़ी जरूरत है। ❑

मनुष्य कर तो कुछ भी सकता है, पर उसकी परिणति से नहीं बच सकता। दुरुपयोग का परिणाम मात्र संकट और विग्रह ही हो सकता है।

—परमपूज्य गुरुदेव

'नारी सशक्तीकरण' वर्ष

परिवार का प्रयोजन

परिवार जिसे कहते हैं, वह मात्र कुछ लोगों का समूह नहीं होता। परिवार में जितने भी सदस्य होते हैं, वे अपनी विशेषता में एक से ही होते हैं। उसे कहते हैं अंतरात्मा का जुड़ाव, परंतु बाह्यरूप से सबको अलग दिखना पड़ता है। यही कर्त्तव्यरूप में सबको स्वीकारना है, सबको अपने में लेना, अपनी इच्छा को सभी में समाहित करना है।

परिवार बनता है कुछ सिद्धांतों पर, जिसे आत्मीयता का प्रहरी तथा श्रेष्ठता की दिशा में अग्रसर कहा जा सके। हम परिवार क्यों बनाते हैं? ताकि अपने मनोभावों को उस विशाल मानव-समुदाय में आरोपित कर सकें, जिसे सँवारने एवं परिष्कृत करने की जिम्मेदारी एक छोटे स्तर पर हमें मिली है। वही परिवार का औचित्य है, इसके सिवा कुछ नहीं।

परिवार के संबंधी आपस में इसलिए रहते हैं ताकि वे एकदूसरे से सीखकर, एकदूसरे की कमियों को पहचानकर उन्हें सुधारने का प्रयास करें तथा हर दृष्टि से उन्नत होते जाएँ। ऐसे परिवार जहाँ बनते हैं, वहाँ सेवा-उत्कर्ष की उमंगें तथा महानता का स्वरूप दिखने लगता है। यही परिवार बनाने का उद्देश्य है, जो लघु नहीं विराट ही है।

इस दृष्टि से सोचा जाए तो प्रत्येक परिवार आदर्श एवं उन्नत कहलाना चाहिए था, परंतु हमने कर यह दिया कि परिवार के सदस्यों को तो संस्कारित नहीं किया, उन्हें ऊँचा एवं बड़ा बनने की प्रेरणा प्रदान नहीं की, बल्कि उन्हें बना इस प्रकार दिया कि वे हमसे मोह के संबंध में हैं तो, परंतु पवित्रता, आत्मीयता, अनुकंपा और सदाशयता उनमें परिलक्षित नहीं होती।

परिवार बनाया जाए तो एक दिव्य उद्देश्य के लिए कि हमें मानव-सभ्यता को उत्कृष्ट मानवों की एक पीढ़ी देनी है, जहाँ पर शांति हो, प्रेम एवं वात्सल्य की मनोभूमि हो, उत्कृष्टता का सरोवर हो। परिवार ऐसा बनाया जाए, जो चेतना का उद्देश्य पूरा करता हो, मन की कमियों को मिटाकर आदर्श मानव बनने की प्रेरणा से हमें भर देता हो, जहाँ का वातावरण इतना स्वच्छ हो कि आदमी के अंदर की अच्छाई स्वतः ही उभरकर आए। यही परिवार बनाने का उद्देश्य है तथा एक आदर्श मानवता के गठन का सच्चा स्वरूप भी।

इस दृष्टि से सोचा जाए तो अपना प्रत्येक प्रयोजन परिवार की भागीदारी एवं उच्च गुणवत्तायुक्त सद्व्यवहार से अभिपूरित होना चाहिए। हम ऐसे बन जाएँ कि परिवारवाले भी कहें कि देखो एक नया फूल खिला है, चेतना ने गुणवत्ता पाई है तथा मानवता को उपहारस्वरूप कुछ नररत्न मिले हैं। इसे ही परिवार की उपयोगिता कहेंगे तथा यह हमें सौभाग्य से पूरित कर देने वाली विधा है।

जहाँ परिवार इन सिद्धांतों का पालन नहीं करता, उसका स्वरूप उत्कृष्ट नहीं बनता, वह चाल-चलन में उन्नत नहीं कहलाता तथा महान मानवों का सृजन वहाँ से नहीं होता तो ऐसा परिवार कहने को तो परिवार है, परंतु मानवीयता के जिस दिव्य-आधार पर हम मानवता को खड़ा करना चाहते हैं, वह उद्देश्य अधूरा रह जाता है।

परिवार टूट जाते हैं; क्योंकि उन्हें बनाने वाले व्यक्ति नहीं होते, उनमें वह सद्‌गुण विकसित नहीं किए जाते, जो कि अनिवार्य हों तथा उनमें चित्त की विशुद्धता का स्वरूप प्रकट नहीं होता तो ऐसा परिवार कहने के लिए तो आपसी सहयोग पर आधारित हो सकता है, परंतु व्यक्तित्व की दृष्टि से, विराट मानव हृदय की अंत:प्रेरणा अनुसार तथा विश्व के सौभाग्य को अभिपूरित करने में उसकी भूमिका नगण्य ही होती है।

हमें परिवार ऐसा बनाना चाहिए जो कि मानवीय एकता का सूचक हो, प्रेम एवं आत्मीयता जिसके सिद्धांत हों तथा समाज में जो एक आदर्श स्थान प्राप्त करे। व्यक्तियों का नहीं चेतना का परिवार, श्रेष्ठता के बीज जिसमें अंकुरित हो सकें, समष्टि के हित जिसका प्रयोजन यथार्थ रूप ले सके—ऐसा परिवार हमें बनाना चाहिए। ऐसा परिवार बनाना ही सुयोग्य है अन्यथा जनसंख्या विस्फोट के चलते हम ठीक-ठीक आगे नहीं बढ़ पाएँगे।

परिवार के सदस्यों की एक सीमित संख्या का होना आवश्यक है तथा परिवार जिस रूप में विकसित होता है, उसकी सुनियोजित योजना तथा आदर्श कार्यक्रम को भी विनिर्मित किया जाना चाहिए।

स्त्री-पुरुष को बच्चे पैदा करने की दृष्टि से नहीं, बल्कि एकदूसरे के साथ आदर्श मानवता के गठन को साकार स्वरूप देने हेतु प्राथमिकता देनी चाहिए व इसी के साथ ही अपना अर्पण इस महान उद्‌देश्य के लिए करना चाहिए तथा श्रेष्ठता की दिशा में अपना समुचित योगदान प्रस्तुत करना चाहिए। तभी हमारी परिवार-व्यवस्था अनुकूल बन पड़ेगी तथा उसे सुविकसित मानव गढ़ने का अवसर प्राप्त हो पाएगा। ❑

पंडित शंकर शास्त्री की गणना काशी के मूर्द्धन्य विद्वानों में होती थी। एक दिन उनके एक शिष्य ने उनसे पूछा—"उनकी सफलता का क्या रहस्य है?"

शास्त्री जी ने शिष्य को एक ताला-चाबी पकड़ाते हुए कहा—"मैंने जीवन में जो भी अर्जित किया, वो इससे प्रेरणा पाकर ही किया।"

शिष्य की उत्सुकता को भाँपते हुए वे बोले—"ये ताला सफलता का प्रतीक है और चाबी पात्रता की। मेरे जीवनभर के अनुभवों का सार यह है कि सफलता का ताला पात्रता की चाबी से खुलता है। यश-प्रतिष्ठा के पीछे भागने के बजाय यदि मनुष्य अपना समय पात्रता विकसित करने में लगाए तो उसका व्यक्तित्व सफलता को उसके जीवन में आने के लिए विवश कर देता है।"

निश्छल भक्ति से हुई सुव्रत को भगवत्प्राप्ति

जीवात्मा अपने पूर्वकृत कर्मों के अनुसार ही नूतन शरीर धारण कर नए जीवन में प्रवेश करती है। जन्म के साथ जीवात्मा के पूर्वकृत कर्म-संस्कार भी उसके साथ होते हैं। उन कर्म-संस्कारों का प्रभाव बचपन से ही मनुष्य के जीवन में परिलक्षित होने लगता है।

पूर्वकृत अर्थात पूर्वजन्म में किए गए भगवद्ध्यान, भजन, स्मरण के कारण ही सुव्रत बालपन से ही भगवद्ध्यान, स्मरण, भजन, चिंतन करने लगे थे। उनका मन स्वभावत: ही भगवान की ओर उन्मुख और आकर्षित होने लगा था। उनके हृदय में भगवान के प्रति प्रेम उमगने लगा था। वे जब अपने साथी बालकों के साथ खेलते तब वे उन बालकों में भी भगवान को निहारते और उन्हें हरि, माधव, कृष्ण, गोविंद, गोपाल, श्याम आदि नामों से पुकारते।

वे चलते-फिरते, उठते-बैठते, खेलते-खाते, हँसते-बोलते, पढ़ते-लिखते, खाते-पीते, देखते-सुनते, सोते-जागते—हर पल भगवान का ही स्मरण, सुमिरन करते। न सिर्फ ध्यान में, बल्कि सभी जगह उन्हें भगवान की उपस्थिति का आभास होता। सूर्य, चंद्र, तारे, सरिता, सागर, पर्वत्र, जल, थल, नभ, वृक्ष, वनस्पति, रंग-बिरंगे खिले हुए पुष्प सबमें वे भगवान की मधुर छवि को ही निहारा करते।

जड़-चेतन सबमें भगवान की मधुर छवि को देख-देखकर वे निहाल होते। वे अपनी माता सुमना व पिता सोमशर्मा में भी भगवान को ही निहारते और माता-पिता की आज्ञा का सदैव पालन करते।

सोमशर्मा अपनी पत्नी और पुत्र सुव्रत के साथ नर्मदा नदी के उद्गमस्थल, अमरकंटक क्षेत्र में रहते थे। ऐसे भगवत्परायण माता-पिता के पुत्र थे सुव्रत। सदैव भगवान के ही प्रेम में मस्त सुव्रत को जब खाने-पीने की भी सुधि नहीं रहती तब माता सुमना पुकारकर कहतीं—"पुत्र! तुम्हें भूख लगी होगी। देखो भूख के मारे तुम्हारा मुख सूखा जा रहा है। आओ जल्दी ही कुछ खा-पी लो पुत्र।"

तब माता की बातें सुनकर सुव्रत कहते—"माँ! भगवान श्रीहरि के ध्यान में जो अमृत-रस झरता है उसी को पी-पीकर मेरी आत्मा तृप्त हो रही है, पर जब माँ बलात् उन्हें पकड़ लाती और भोजन कराने लगती तब भोजन ग्रहण करते हुए वह भोजन को भगवान का दिव्य प्रसाद मानकर ही ग्रहण करते।"

वे भोजन करते हुए कहते—"माँ! यह अन्न भी भगवान ही है। इस अन्नरूपी भगवान से आत्मा रूपी भगवान तृप्त हों।" भक्त सुव्रत जब शयन करते तब भगवान श्रीकृष्ण के मधुर मनोहर रूप का चिंतन व ध्यान करते हुए कहते—"मैं योगनिद्रा में जाकर भगवान श्रीकृष्ण की ही शरण में जा रहा हूँ। इस प्रकार खेलने-खाने, सोने-जागने आदि सभी कार्यों में वे भगवान का ही स्मरण करते और अपने समस्त कार्यों, कर्मों को भगवान को ही अर्पित कर देते।"

गुरुकुल की शिक्षा प्राप्त कर लेने के बाद एक दिन सुव्रत ने अपने माता-पिता से कहा कि मैंने संसार की विद्या, शिक्षा तो प्राप्त कर ली, पर

अब मुझे योगविद्या, आत्मविद्या, ब्रह्मविद्या पानी है।

इस प्रकार माता-पिता से आज्ञा लेकर सुव्रत नर्मदा जी के दक्षिण तट पर वैदूर्य पर्वत पर चले गए और वहीं एक कुटिया बनाकर रहने लगे और भगवद्ध्यान में लग गए। वर्षों तक भगवद्ध्यान में लीन रहने से उनकी आत्मा में परमात्मा के ज्ञान का प्रकाश हुआ और फिर स्वयं भगवान श्रीहरि उनके सम्मुख प्रकट हुए। भगवान श्रीहरि क्रे सुंदर नील-श्याम शरीर पर दिव्य पीतांबर और आभूषण शोभा पा रहे थे। उनके हाथों में शंख, चक्र और गदा सुशोभित थे।

भगवान ने सुव्रत से कहा—"वत्स सुव्रत! तुम्हारी भक्ति से मैं अति प्रसन्न हूँ। तुम्हारी भक्ति से प्रसन्न होकर मैं स्वयं श्रीकृष्ण तुम्हारे सामने उपस्थित हूँ। उठो वत्स! तुम वर ग्रहण करो।" भगवान के दिव्यस्वरूप को देखते ही आनंद के आवेश से सुव्रत के रोम-रोम पुलकित हो गए। उनके नेत्रों से आनंदाश्रुओं, प्रेमाश्रुओं की झड़ी लग गई।

फिर प्रेम और आनंद से आवेशित सुव्रत ने भगवान को नमन करते हुए कहा—"हे जनार्दन! हे दीनबंधु! हे भक्तवत्सल! हे शरणागतवत्सल! मैं इस भयावह संसार-सागर में डूब रहा हूँ। इस संसार-सागर में बड़े-बड़े दु:खों की भीषण लहरें उठ रही हैं, विविध मोह की तरंगों से यह उछल रहा है। भगवन्! मैं अपने कर्मों के कारण ही इस सागर में पड़ा हूँ। कर्मों के काले-काले बादल गरज रहे हैं और मुझे भयभीत कर रहे हैं। हे प्रभो! मुझे आप ही इस दु:ख-सागर से उबार सकते हैं। आप अपने करकमल का सहारा देकर मुझे बचा लीजिए। हे प्रभो! मेरे सभी कर्मों और पापों को नष्ट कर मुझे अपनी शरण में ले लीजिए। मैं हर प्रकार से आपका हूँ और आप ही मेरे हैं। आप ऐसी कृपा कीजिए कि मैं आपके चरणकमलों को कभी भूलूँ नहीं। और मेरे माता-पिता को भी अपने परमधाम में ले चलिए।"

इस प्रकार स्तुति करके सुव्रत शांत हो गए और तब भगवान श्रीकृष्ण ने कहा—"ऐसा ही होगा वत्स!" और इतना कहकर भगवान अंतर्धान हो गए सुव्रत को भगवान की कृपा से माता-पिता सहित भगवान के परमधाम की प्राप्ति हुई। ❑

इंद्र ब्राह्मण के वेश में कर्ण से मिलने पहुँचे एवं उनके कवच और कुंडलों की माँग की। दानवीर कर्ण ने इस हेतु आज्ञा सहर्ष दे दी। ब्राह्मण वेशधारी इंद्र ने कर्ण को आगाह किया कि कवच और कुंडल के हटते ही उनके चारों ओर आच्छादित दैवी सुरक्षा कवच गिर जाएगा और उन पर काल का आक्रमण कभी भी हो सकता है।

कर्ण के चेहरे पर मुस्कान आई और वे बोले—"विप्रवर! मैं इस तथ्य से भलीभाँति परिचित हूँ, पर साथ ही मैं यह भी जानता हूँ कि मेरे प्राण सन्मार्ग और सत्कार्यों हेतु प्रेरणा से ज्यादा मूल्यवान नहीं हैं।" यह कहते हुए कर्ण ने अपने कवच और कुंडल उतारकर इंद्र के हाथ में दे दिए।

भगवान श्रीराम का उच्चतम आदर्श

युगधर्म के अनुसार त्रेतायुग में एक अलौकिक अवतार हुआ, जिनके आदर्श और मर्यादित आचरण के कारण भगवान के रूप में मान्यता मिली। हजारों वर्ष व्यतीत हो जाने के बावजूद उस अप्रतिम चरित्र को महानता की पराकाष्ठा प्राप्त हुई। वे ही अत्यंत मर्यादित चरित्र वाले प्रभु श्रीराम अयोध्यानरेश महाराज दशरथ की बड़ी रानी कौशल्या के पुत्र थे।

श्रीराम के अवतरण को कुछ लोग साधारण मनुष्य की तरह जन्म लेना, कुछ प्रकट होना और कुछ लोग अवतार धारण करना मानते हैं। श्रीरामचरितमानस के रचयिता गोस्वामी तुलसीदास ने प्रभु के इस धराधाम पर आने के तीनों रूपों की मान्यता दी है। नर चरित्र में जन्म लेना ही श्रेयस्कर हुआ; जैसे—

दशरथ पुत्रजन्म सुनि काना।
मानहुँ ब्रह्मानंद समाना॥

नर नाट्यलीला की दृष्टि से भगवान श्रीराम की चैत्र मास की नवमी तिथि को मध्याह्न में प्राकट्य लीला संपन्न हुई।

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला
विप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार।

अतः अवतारवाद की ही अवधारणा पर बहिरंग रूप में दृष्टिपात करें तो अवगत हो जाता है कि भगवान का अवतार लेना अपनी स्वीकारोक्ति ही है।

भगवान शंकर माता पार्वती को ज्ञानघाट पर कथा-श्रवण कराने के प्रारंभ में ही कहते हैं—

हरि अवतार हेतु जेहि होई।
इदमित्थं कहि जान न सोई॥

तात्पर्य से यह सिद्ध होता है कि भगवान के अवतार लेने का कोई एक कारण नहीं था। भगवान राम को रावण का वध करना ही मनुष्य देह धारण का हेतु नहीं था, लेकिन उत्तरकांड में उन्हीं के शिष्य काकभुशुंडि गरुड़ जी को कथा-श्रवण कराते हुए कहते हैं कि यह बिलकुल निश्चित मत है कि भगवान का इस धराधाम पर आगमन केवल भक्तों के लिए ही है और बिना उनकी भक्ति किए किसी का कल्याण नहीं हो सकता।

विनिश्चतं वदामि ते न अन्यथा वचांसि मे।

इस तरह से कोई भी महापुरुष इस धराधाम पर आकर अपने आचरण एवं क्रियाकलापों द्वारा जो मार्ग अपनाता है, वही मार्ग अगली पीढ़ी के लिए अनुकरणीय हो जाता है। इस कड़ी में भगवान राम से महात्मा गांधी तक का आदर्श समाज के स्वीकार्य है। भगवान राम की वनलीला के प्रसंग में वे सर्वप्रथम केवट से गंगा पार जाने हेतु नाव माँगते हैं। दूसरी जगह तीर्थराज प्रयाग में भरद्वाज से वे रास्ता पूछते हैं।

नाथ कहहु हम केहिं मग जाहीं।

तीसरे में महर्षि वाल्मीकि से रहने हेतु स्थान पूछ रहे हैं, कहाँ रहूँ और चौथे स्थान पर भक्तिमती शबरी जी से सीता जी के बारे में जिज्ञासा प्रकट करते हैं।

जनकसुता कइ सुधि भामिनी।
जानहि कहु करिबरगामिनी॥

इसका सीधा-सा तात्पर्य यह कि भगवान श्री राघवेंद्र मनुष्य रूप में चरित्र के माध्यम से ही हम सबको आदर्श जीवनपद्धति अपनाने का मार्ग

प्रशस्त करते हैं। सुग्रीव के कथनानुसार श्री हनुमान जी प्रभु से विप्र रूप में मिलने पहुँचते हैं और क्षत्रिय रूपधारी श्रीराम को मस्तक झुकाकर प्रश्न करते हैं। उनके प्रश्नों को सुनकर भगवान उत्तर देते हुए अंत में कहते हैं।

आपन चरित कहा हम गाई।
कहहु बिप्र निज कथा बुझाई॥

मैंने अपना चरित्र सुना दिया। आप विप्र देवता अपनी कथा सुनाइए, तो हनुमान जी ने सुनाया।

एकु मैं मंद मोहबस, कुटिल हृदय अग्यान।

भगवान ने पूछा विप्र देवता यह आप की कथा है कि व्यथा। तो हनुमान जी ने कहा कि प्रभु जीव की तो व्यथा ही होती है। इसलिए—

पुनि प्रभु मोहि बिसारेउ....

अर्थात हे भगवान पुनः मुझे यानी जीव को भूल मत जाइएगा और प्रभु श्रीराम को हनुमान जी अतिशय प्रिय हो गए।

हनुमान सम नहिं बड़ भागी।
नहि कोऊ राम चरन अनुरागी॥

पं० राम किंकर जी उपाध्याय श्रीरामचरितमानस को हृदय की भाषा का प्रयोग मानते हैं। इसलिए इसे प्रयोगशास्त्र की संज्ञा भी दी जाती है। पहली सांकेतिक भाषा है और दूसरी सूत्रात्मक भाषा। भगवान श्रीराम के मानव चरित्र पर यदि विहंगम दृष्टि प्रदान करें तो विदित होता है कि समाज के अन्य प्रायः सभी संबंधों के पालन में जो भी सूत्र प्राप्त होगा, उसमें सर्वकालिक मर्यादा के सर्वोच्च शिखर का प्रतिपादन होता हुआ प्रतीत होगा। जैसे—

भायप भगति भरत आचरनू।
राजकुमारि सिखावनु सुनहू।
सुनहु प्रिया ब्रत रुचिर सुशीला।
मैं कछु करबि ललित नरलीला।
तुम्ह पावक महुँ करहु निवासा।
जौ लगि करौं निसाचर नासा॥

भगवान श्रीराम के मुख्यतः तीन मित्र थे। निषादराज, सुग्रीव और विभीषण। चरित्रवाद की पराकाष्ठा के प्रतीक मित्रता की सारी विधाओं के पालन एवं क्रियान्वयन में कोई भी चरित्र इनकी तुलना नहीं कर सकता। सुग्रीव को जब हनुमान जी के माध्यम से मित्र बनाते हैं तो उसकी सारी परिस्थितियों को अनुकूल करके वे मात्र इतनी ही सुग्रीव से आशा रखते हैं।

अंगद सहित करहु तुम राजू।
संतत हृदयँ धरेहु मम काजू॥

यद्यपि श्रीराम का कोई शत्रु था ही नहीं, फिर भी लोकापवाद में रावण शत्रु था और अंगद जी को उसके यहाँ दूत बनाकर भेजने का प्रस्ताव आया तो स्वयं प्रभु श्रीराम अंगद से कहते हैं कि

काजु हमार तासु हित होई।
रिपु सन करेहु बतकही सोई॥

अर्थात शत्रुता की प्रबल मूर्ति रावण के हित की भी बात सोचना प्रभु श्रीराम के अतिरिक्त अन्यत्र असंभव एवं सर्वथा दुर्लभ है।

बैरिउ राम बड़ाई करहीं।

यद्यपि श्रीराम अयोध्या के चक्रवर्ती सम्राट श्री दशरथ जी के प्राणप्यारे पुत्र थे और उनके राज्याभिषेक के अवसर पर रघुवंश कुलपूज्य गुरु वसिष्ठ उनके घर जाकर राज्यारोहण की सूचना देते हैं। आगे उल्लेख आता है कि

सेवक सदन स्वामि आगमनू।
मंगल मूल अमंगल दमनू॥

प्रभु श्रीराम जैसा दाता आज तक कोई सुनने में नहीं आया। जिस संपत्ति को शिव जी ने रावण को दसों मस्तक चढ़ाने के बाद दिया, उसी को प्रभु विभीषण को बिना संकोच देते हैं।

जो संपति सिव रावनहि दीन्हि दिएँ दस माथ।
सोइ संपदा बिभीषनहि सकुचि दीन्हि रघुनाथ॥

भगवान श्रीराम जैसा महान व्यक्तित्व इस मानव सृष्टि में आज तक कोई दिखाई ही नहीं दिया। स्वयं प्रभु श्रीराम हनुमान जी के परोपकार को भरत जी से सुनाते हुए कहते हैं कि

कपि से उऋण हम नाहीं भरत भाई

श्री हनुमान जी से तो वे स्वयं कहते हैं कि

प्रति उपकार करौं का तोरा।
सनमुख होइ न सकत मन मोरा॥

अर्थात श्रीराम जैसा कृतज्ञ कोई हो ही नहीं सकता। अपने चरित्र के कारण ही श्रीराम चरित्रवाद के श्रेष्ठतम व्यक्तित्व के रूप में समाज के प्रत्येक वर्ग के लिए आदर्श की प्रतिमूर्ति थे। किसी राज्य के स्वामी के रूप में श्रीराम जैसा न तो कोई हुआ न ही होगा। राजा में जितने गुणों का समावेश होना चाहिए, सभी गुण श्रीराम द्वारा स्वीकार कर लेने से वे सर्वश्रेष्ठ एवं पूज्य हो गए।

रामराज्य की सार्थकता और उपयोगिता पूरे मानव मात्र के लिए है। उसका परिचय आज भी जाना जा सकता है। प्रायः आज के परिप्रेक्ष्य में राजसत्ता के संचालन एवं प्रतिष्ठापन के क्रम में रामराज्य को स्वीकार किया जाता है, वह रामराज्य क्या हो सकता है।

सूत्रात्मक ढंग से विचार करें तो प्रश्न उठता है कि रामराज्य धर्मप्रधान था या कर्मप्रधान या ज्ञानप्रधान था या भक्तिप्रधान, जिसे हम **'सर्वे भवन्तु सुखिनः'** की कल्पना कर सकते हैं। रामराज्य ज्ञानयोग, कर्मयोग और भक्तियोग का संयोग है, जिसे धर्ममय रथ के द्वारा संचालित किया गया है। प्रभु श्रीराम एवं रावण के युद्धारंभ के ठीक पहले विभीषण द्वारा यह वाक्य कहना कि

रावनु रथी बिरथ रघुबीरा।
देखि बिभीषन भयउ अधीरा॥

यह सुनकर श्रीराम ने मर्यादा की पराकाष्ठा स्वरूप एक धर्मरथ का वर्णन किया और कहा—

सखा धर्ममय अस रथ जाकें।
जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताकें॥

इस धर्मरथ की व्याख्या में ज्ञान, कर्म, भक्ति का विशेष प्रयोग हुआ, जिसे भगवान श्रीकृष्ण ने भी गीता उपदेश के समय अर्जुन को बताया था।

रामराज्य की अवधारणा कोई कपोल कल्पना नहीं है, बल्कि यथार्थ का प्रतिपादन है। राज्यारोहण के बाद भगवान श्री राघवेंद्र का राष्ट्र हेतु जो संबोधन होता है, इसे यदि ध्यान देकर पढ़ेंगे और समझेंगे तो इसका भाव स्पष्ट हो जाएगा—

जौं अनीति कछु भाषौं भाई।
तौ मोहि बरजहु भय बिसराई॥
नर तनु पाइ बिषयँ मन देहीं।
काँच किरिच बदले ते लेहीं॥

इस प्रकार श्रीराम अपनी महत्ता को न बता कर यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि आम नागरिक के सर्वांगीण विकास और हित में ही राज्य और राजा का हित संभव है। श्रीराम का राष्ट्र एवं जन्मभूमि के प्रति भाव भी अत्यंत अनुकरणीय है। जब पुष्पक विमान अयोध्यापुरी के ऊपर आया तो वे अपने मित्रों से कहते हैं कि

इहाँ भानुकुल कमल दिवाकर।
कपिन्ह देखावत नगर मनोहर॥
जन्मभूमि मम पुरी सुहावनि।
उत्तर दिसि बह सरजू पावनि॥

लंका में प्रस्थान के पूर्व भी लक्ष्मण से कहते हैं—

यद्यपि स्वर्णमयी लंका
तद्यपि लक्ष्मण न रोच्यते।

जननी जन्मभूमिश्च
स्वर्गादपि गरीयसी॥

इस तरह श्रीराम अपने देश और वहाँ के निवासियों को वही सम्मान देते हैं, जो राजपरिवार से संबद्ध व्यक्तियों को। जैसे जब श्रीराम और श्री भरत का मिलन हुआ तो प्रभु के इस मिलने की रीति को देखकर सब लोग यही कहने लगे कि हमसे भी मिलेंगे क्या?

अमित रूप प्रकटे तेहि काला।
जथाजोग मिले सबहि कृपाला॥

इस प्रकार श्रीराम का इस धराधाम पर आगमन **'सर्वजन हिताय-सर्वजन सुखाय'** को सही अर्थों में चरितार्थ करने के लिए ही होता है।

श्रीराम के चरित्र को चाहे वह नर चरित्र हो या नर नाट्यलीला—दोनों ही अंतरंग आदर्श और मर्यादा के सांगोपांग निरूपण से ओत-प्रोत हैं। उनकी भक्तिगाथा, प्रजा प्रेम को चाहे नगर के निवासी हों या जंगल के रहने वाले—सभी समान भाव से सुनते हैं।

बेद बचन मुनि मन अगम ते प्रभु करुना ऐन।
बचन किरातन्ह के सुनत जिमि पितु बालक बैन॥

जब जंगल में रहने वाली शबरी से वार्त्ता होती है तो इसके आतिथ्य को स्वीकारने में उनको कोई हिचकिचाहट नहीं होती, बल्कि शबरी के फलों को वे राजप्रसाद की तरह ग्रहण करते हैं।

प्रेम सहित प्रभु खाए बारंबार बखानि॥

कबंध प्रसंग में कहते हैं—

सुनु गंधर्ब कहउँ मैं तोही।
मोहि न सोहाइ ब्रह्मकुल द्रोही॥

वे ही राम शबरी से कहते हैं—

कह रघुपति सुनु भामिनि बाता।
मानउँ एक भगति कर नाता॥

इस प्रकार श्रीराम का चरित्र लोकमत या वेदमत; चाहे विद्वान या ग्रामीणजन सभी को प्रभावित किए बिना नहीं रहता है।

श्री गोस्वामी तुलसीदास जी का रामचरितमानस तो संपूर्ण रूप से श्रीराम के आदर्श को स्थापित करने का सशक्त माध्यम बनकर प्रतिष्ठित हो चुका है और उसकी उपादेयता को समाज का प्रत्येक वर्ग स्वीकार चुका है। लोकोपवाद को छोड़कर ऐसा कोई नहीं होगा जिसे श्रीराम का आदर्श और मर्यादा से परिपूर्ण भाव प्रभावित किए बिना न रहे। ❑

नदी किनारे एक गेंदे का पौधा लगा था। उसमें लगे फूल ने पानी में पड़े पत्थर को हेय दृष्टि से देखते हुए कहा—''मुझे तुम्हारी स्थिति पर बड़ा तरस आता है। पानी का बहाव कैसे तुम्हें रगड़-रगड़कर घिसता हुआ जाता है। कैसा तुच्छ जीवन है तुम्हारा। मुझे देखो मैं कैसी उन्नत स्थिति में मजे कर रहा हूँ।''

पत्थर ने पुष्प की बात सुनकर अनसुनी कर दी। कुछ देर बाद पूजा की थाली में पड़े उसी पुष्प ने देखा कि नदी का वही पत्थर शालग्राम के रूप में पूजा-वेदी पर प्रतिष्ठित है और पुष्प को उसके चरणों में अर्पित किया जा रहा है। इस बार पत्थर ने कहा—''मित्र पुष्प! देखो घिस-घिसकर परिष्कृत और परिमार्जित होने वाले धन्यता की सीढ़ियाँ चढ़ते हैं और मिथ्या अभिमान रखने वाले दुर्गति को प्राप्त होते हैं।''

चरित्र निर्माण के महत्त्व को समझा जाए

मनुष्य इस सृष्टि का सबसे विचित्र एवं विलक्षण प्राणी है, जिसका स्वरूप विरोधाभासी तथ्यों से युक्त उच्चतर एवं निम्नतर प्रकृति का अद्‌भुत समुच्चय है। एक ओर जहाँ इसमें दैवी संभावनाएँ भरी पड़ी हैं, तो दूसरी ओर पाशविक प्रवृत्तियों का बाहुल्य भी उसके अस्तित्व का कटु सत्य है। इसी आधार पर श्रीअरविंद ने सामान्य मनुष्य को मेंटल एनिमल भी कहा है।

अधिकांश मनुष्य इसी सत्य को चरितार्थ करते हुए पशु की भाँति जीवन जीते हैं। वहीं कुछ समझदार लोग अपनी दिव्यता को जगाने का प्रयास करते हैं और अपने देवस्वरूप को प्राप्त करने में सफल होते हैं। इस प्रक्रिया में मानव से महामानव और देवमानव बनने की सीढ़ियों को पार करते हुए समझदार लोग जीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त होते हैं। चरित्र निर्माण की प्रक्रिया इसका आधार रहती है।

चरित्र निर्माण वह महान प्रक्रिया है, जो उसे सृष्टि के अन्य प्राणियों से श्रेष्ठ बनाती है। चरित्र निर्माण की प्रक्रिया में व्यक्ति का गहनतम स्तर पर परिष्कार होता है, उसके चिंतन और आचरण-व्यवहार में आमूलचूल परिवर्तन होता है। इसके साथ समाज, संसार एवं विश्व के सुधार एवं निर्माण का कार्य भी सुनिश्चित होता है।

एक चरित्रवान व्यक्ति असंख्यों के लिए प्रेरणा का स्रोत बनता है और कितने सारे भटके एवं भ्रमित इनसानों को जीने की नई राह दिखा जाता है। चरित्र व्यक्तित्व का सार है, रूह की खुशबू है। यह व्यक्ति के विचार, भाव, आचरण, व्यवहार का सम्मिलित प्रभाव है।

वस्तुतः चरित्र व्यक्तित्व के सारतत्त्व का प्रतिनिधित्व करता है। व्यक्ति के चिंतन एवं व्यवहार के माध्यम से यह प्रतिबिंबित होता है। चरित्र जीवन का मूल्य बोध है, आचरण-व्यवहार की लक्ष्मण रेखा है। चरित्रवान व्यक्ति के प्रति स्वतः ही सम्मान, श्रद्धा एवं सात्त्विक प्रेम के भाव उमड़ते हैं।

चरित्र एक ऐसा गुण है, जो मनुष्य को अन्य जीवों से अलग करता है, इनसान को देवतुल्य बनाता है। आश्चर्य नहीं कि स्वयं देवता भी इस विशेषता के कारण मानव जन्म लेने के लिए तरसते हैं। कहावत प्रख्यात है कि धन गया तो समझो कुछ नहीं गया, स्वास्थ्य गया तो कुछ गया, चरित्र गया तो समझो सब कुछ चला गया।

आज चरित्र के अभाव में व्यक्ति जीवन का अर्थ, सार्थकता का भाव और दिशा खो बैठा है। चरित्र निर्माण के अभाव में आज पूरा विश्व त्राहिमाम कर रहा है। तरह-तरह के आकर्षणों एवं प्रलोभनों के बीच आज का मानव सूखे पत्ते की भाँति उड़ने के लिए विवश है, माया की चकाचौंध में उसकी आँखें चुँधिया गई हैं।

आश्चर्य नहीं कि लोग अकूत संपदा व धन के बावजूद खुश नहीं हैं। सकल भौतिक संसाधन, सामाजिक रुतबा, रोब-दाब होते हुए भी उन्हें शांति नहीं मिल रही, संतोष से वे वंचित हैं। आज समाज में जितनी समस्याएँ विद्यमान हैं, उनका प्रमुख कारण चरित्र निर्माण के प्रति बरती गई उदासीनता है। मनुष्य अपना सारा जीवन सुख-भोगों की भाग-दौड़ में गँवा रहा है।

क्षणिक सुख-भोगों एवं संकीर्ण स्वार्थों की अंधी दौड़ में जीवन के इस सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य को भुला बैठा है। अतः बाह्य जीवन में नित नए-नए प्रतिमानों को छूते हुए भी वह आंतरिक अवगति, पतन एवं पराभव को प्राप्त हो रहा है, जो गंभीर मनोरोगों से लेकर कलह-क्लेश, अशांति एवं गहन विषाद के रूप में उसके जीवन को दूभर किए हुए हैं।

इस चतुर्दिक हाहाकार से बाहर निकलने का एक ही मार्ग है—मनुष्य को चरित्र निर्माण की आवश्यकता एवं महत्त्व को समझना होगा। एक सामाजिक प्राणी के नाते मनुष्य जिस सम्मान एवं प्रशंसा को प्राप्त करना चाहता है, आत्मीयता का स्पर्श चाहता है, उसकी एकमात्र कसौटी है चरित्र निर्माण, जिसके आधार पर व्यक्तित्व प्रामाणिक बनता है, इसमें विश्वसनीयता का समावेश होता है। व्यक्तित्व का समग्र विकास गहनतम स्तर पर इसी आधार पर सुनिश्चित होता है। यही मानव से महामानव एवं देवमानव बनने का राजमार्ग है।

व्यक्ति निर्माण से युग निर्माण की जो संकल्पना युगऋषि ने की है, वह चरित्र निर्माण के आधार पर ही संभव है, जहाँ व्यक्ति दूसरों को बदलने से पहले आत्मसुधार की बात करता है। परिवर्तन का शुभारंभ स्वयं से करता है। इस रूप में चरित्रवान व्यक्ति ही राष्ट्र की वास्तविक संपदा है। इन्हीं के आधार पर व्यक्ति निर्माण से परिवार निर्माण, समाज निर्माण एवं राष्ट्र निर्माण की संकल्पना साकार होती है। चरित्र निर्माण को जीवन का अंग बनाने के लिए इसके आधार को समझना होगा। वास्तव में चरित्र की रचना संस्कारों से होती है और संस्कारों की रचना विचारों से होती है।

आदर्श विचार ही आदर्श चरित्र का निर्माण करते हैं। कहावत भी है कि जैसा व्यक्ति सोचता है, वैसा ही करता है और वैसा ही बनता जाता है। जिन महापुरुषों के आदर्श जीवन को देखकर हम श्रद्धावनत् होते हैं तथा जीवन में श्रेष्ठतम उड़ान भरने का साहस कर पाते हैं, उनके आदर्श चरित्र के मूल में आदर्श विचारों के बीज ही तो थे, जिसके अनुरूप उन्होंने स्वयं को गढ़ा।

ये श्रेष्ठ विचार ही श्रेष्ठ कर्मों का आधार बनते हैं, वे ही श्रेष्ठ आदतों के साथ क्रमिक रूप में श्रेष्ठ संस्कारों का रूप लेते हैं और इन्हीं के अनुरूप अंततः श्रेष्ठ चरित्र का गठन होता है। निस्संदेह रूप में शील-संयम-सदाचार इसके आधार बनते हैं। सादा जीवन-उच्च विचार इसके अभिन्न घटक रहते हैं।

संवेदनशीलता, विनम्रता, शालीनता, सहकार जैसे सद्‌गुण इसके साथ पनपते हैं। इंद्रिय-संयम, समय-संयम, अर्थ-संयम और विचार-संयम चरित्र निर्माण के अनिवार्य घटक हैं। इसमें वाणी का संयम व्यावहारिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण रहता है।

सत्य, सरल और शालीन वाणी चरित्र का निर्माण करती है। वाणी में मधुरता का होना चरित्र निर्माण में अहम भूमिका निभाता है। वस्तुतः विनम्र व्यवहार एवं सहयोग की भावना चरित्रवान व्यक्ति का आभूषण होता है। वह परहित के लिए समर्पित यज्ञमय जीवन जीता है।

इस चरित्र निर्माण के आधार पर ही स्थिर सुख-शांति, लोक सम्मान, विश्वसनीयता एवं सच्ची सफलता प्राप्त होती है। व्यक्ति श्रद्धा का पात्र बनता है।

परिवार, समाज, राष्ट्र एवं पूरे विश्व में सुख-शांति एवं समृद्धि का यही ठोस आधार है। लोक-परलोक में सफलता एवं सद्‌गति इसी के आधार पर संभव होती है। निस्संदेह रूप में चरित्र एक अनमोल संपदा है, जिसके अर्जन के लिए जो भी कीमत चुकाई जाए कम है; क्योंकि इसके आधार पर सब कुछ पाया जा सकता है।

चरित्रवान व्यक्ति अंततः काल के भाल पर अपने कालजयी व्यक्तित्व की अमिट छाप छोड़ जाता है और पीढ़ियाँ उसके व्यक्तित्व एवं जीवन-दर्शन से प्रेरणा पाती हैं। ❑

भक्ति की शक्ति है अपार

कहते हैं कि जहाँ सच्ची श्रद्धा व भक्ति के साथ भगवान राम की कथा कही या गाई जाती है, वहाँ रामभक्त हनुमान किसी-न-किसी रूप में, दृश्य अथवा अदृश्य होकर कथाश्रवण करने अवश्य आते हैं। इसी विश्वास को लेकर एक साधु महाराज श्री रामायण जी की कथा सुनाया करते थे। साधु महाराज मात्र वेश से नहीं, वरन चिंतन, चरित्र और व्यवहार से भी साधु थे। वे नित्य ब्राह्ममुहूर्त में उठकर स्नानादि से निवृत्त होकर आसन पर बैठकर प्राणायामादि के द्वारा चित्त को स्थिर व एकाग्र कर अपने हृदय में भगवान श्रीराम के दिव्य स्वरूप का ध्यान करते थे।

भगवान की नित्य निरंतर भक्ति व ध्यान करने से उनका चित्त निर्मल हो चुका था। उनकी भक्ति प्रगाढ़ व परिपक्व हो चुकी थी। वे भगवद्उपासना के साथ-साथ नित्य श्री रामायण जी की कथा भी किया करते थे। उनकी कथा सुनकर लोग आनंदविभोर हो जाते थे। उनका एक नियम था, वह कथा प्रारंभ करने से पहले श्री हनुमान जी को कथाश्रवण करने के लिए आमंत्रित करते थे।

वे जहाँ पर कथा सुनाते थे, वहाँ एक पवित्र स्थान पर हनुमान जी को विराजने के लिए आसन के रूप में एक गद्दी रख दिया करते थे और श्री हनुमान जी को आसन पर विराजने के लिए वह गाते थे—'आइए-आइए, कथा में हनुमंत जी विराजिए।' वे इतना भावविभोर होकर गाते थे और हनुमान जी को विराजने को कहते थे कि भगवान के प्रति, हनुमान जी के प्रति उनका अनुराग उनके नेत्रों से आँसू बन छलक पड़ता था।

उनके गायन और रुदन को देखकर कथा में उपस्थित श्रोता भी आनंदविभोर हो जाते थे। गायन, आवाहन के बाद वह कथा प्रारंभ करते थे। एक सज्जन प्रतिदिन रामकथा सुनने आया करते थे व भक्तिभाव से कथा सुनते थे, पर एक दिन उनके मन में विचार आया कि महाराज कथा आरंभ करने से पूर्व 'आइए-आइए, कथा में हनुमंत जी विराजिए' ऐसा कहकर श्री हनुमान जी को बुलाते हैं, तो क्या वास्तव में हनुमान जी यहाँ पर आते होंगे?

सो उन्होंने एक दिन साधु महाराज से पूछ ही लिया—"महाराज! आप रामायण की बहुत सुंदर और रोचक कथा सुनाते हैं, हमें कथा सुनकर बड़ा आनंद होता है, परंतु आप जो आसन के रूप में गद्दी प्रतिदिन हनुमान जी को देते हैं और उन्हें उस पर विराजने को कहते हैं, उस पर क्या वास्तव में हनुमान जी विराजते हैं, विराजमान होते हैं?"

साधु महाराज बोले—"हाँ! वे यहाँ अवश्य विराजते हैं। ऐसा मेरा विश्वास है। यह मेरी श्रद्धा है और श्रद्धा की शक्ति अपार है। जब सच्ची श्रद्धा होती है, भक्ति होती है तब भगवान श्रद्धा और भक्ति के वशीभूत होकर अवश्य विराजते हैं।" भगवान शंकर ने श्री रामचरितमानस के बालकांड में स्पष्ट रूप से कहा है—

बैठे सुर सब करहिं बिचारा।
कहँ पाइअ प्रभु करिअ पुकारा॥
पुर बैकुंठ जान कह कोई।
कोउ कह पयनिधि बस प्रभु सोई॥

जाके हृदयँ भगति जसि प्रीती।
प्रभु तहँ प्रगट सदा तेहिं रीती॥
हरि ब्यापक सर्बत्र समाना।
प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना॥
देस काल दिसि बिदिसिहु माहीं।
कहहु सो कहाँ जहाँ प्रभु नाहीं॥
अग जगमय सब रहित बिरागी।
प्रेम तें प्रभु प्रगटइ जिमि आगी॥
मोर बचन सब के मन माना।
साधु साधु करि ब्रह्म बखाना॥

अर्थात भगवान शिव भगवान की कथा सुनाते हुए माता पार्वती से कह रहे हैं कि हे पार्वती! एक बार सब देवता बैठकर विचार करने लगे कि प्रभु को कहाँ पावें, ताकि उनके सामने पुकार करें, फरियाद करें।

भगवान को पाने और पुकारने के लिए कोई बैकुंठपुरी जाने को कहता था तो कोई कहता था कि प्रभु क्षीरसागर में निवास करते हैं। वहीं जाकर उन्हें पाया और पुकारा जा सकता है, पर हे पार्वती! मैं यह सत्य उजागर करता हूँ कि जिसके हृदय में जैसी भक्ति और प्रीति होती है, उसके लिए प्रभु वहाँ सदा उसी रीति से प्रकट होते हैं।

हे पार्वती! उस समय मैं भी उस देवसमाज में ही बैठा था, इसलिए देवताओं के मन में 'भगवान को कैसे पाएँ? और भगवान को कैसे पुकारें, कहाँ पुकारें?' आदि जो प्रश्न थे उनका निराकरण करने को मैंने अवसर पाकर एक बात यह कही की मैं तो यह जानता हूँ कि भगवान सब जगह समान रूप से व्यापक हैं, प्रेम से वे कहीं भी प्रकट हो जाते हैं। देश, काल, दिशा, विदिशा में बताओ, ऐसी जगह कहाँ है, जहाँ प्रभु न हों।

वे भगवान चराचरमय, चराचर में व्याप्त होते हुए भी सबसे रहित हैं और विरक्त हैं। उनकी कहीं आसक्ति नहीं है। वे प्रेम से प्रकट होते हैं, जैसे अग्नि। अग्नि अव्यक्त रूप से सर्वत्र व्याप्त है, परंतु जहाँ उसके लिए अरणिमंथनादि साधन किए जाते हैं, वहाँ वह प्रकट होती है। उसी प्रकार सर्वत्र व्याप्त भगवान भी प्रेम से प्रकट होते हैं। सभा में बैठे सभी देवों को मेरी यह बात प्रिय लगी और ब्रह्मा जी ने 'साधु-साधु' कहकर मेरी बड़ाई की।

फिर उस सज्जन के संदेह को दूर करने को साधु महाराज ने कहा—"मेरी श्रद्धा कहती है, मेरी भक्ति कहती है कि प्रेम से पुकारने पर प्रभु अवश्य पधारते हैं, विराजते हैं। मैं इसे अपने जीवन में सदैव अनुभव भी करता हूँ। रह गई बात हनुमान जी के रामकथा में विराजने की, तो हनुमान जी का तो यह वचन ही है कि जहाँ रामकथा सुनाई और सुनी जाती है, वहाँ मैं अवश्य पधारता हूँ, विराजता हूँ। हनुमान जी तो कथारसिक हैं। जहाँ प्रभु राम की कथा कही-सुनी जाती है, वहाँ वे कथा का रसपान करने अवश्य पधारते हैं। श्री हनुमान चालीसा में हनुमान जी के विषय में गोस्वामी तुलसीदास जी ने लिखा है—

प्रभु चरित्र सुनिबे को रसिया।
राम लखन सीता मन बसिया॥
राम रसायन तुम्हरे पासा।
सदा रहो रघुपति के दासा॥"

तब उन महाशय ने कहा—"महाराज! मैं आपकी बातों पर विश्वास करता हूँ। रामायण और हनुमान चालीसा में कही गई बातें भी सत्य हैं—ऐसा मैं मानता हूँ, पर महाराज जी हम यह कैसे विश्वास करें कि हनुमान जी अभी यहाँ इस कथा में विराजमान हैं, वे इस कथा में पधारे हुए हैं? आप इसका कोई ठोस प्रमाण दीजिए। हनुमान जी कथा सुनने के लिए आते हैं—आपको यह प्रमाणित करके दिखाना चाहिए, जिससे सभी लोग इस बात पर विश्वास कर सकें।"

साधु महाराज ने उन महाशय को समझाया कि "आस्था, श्रद्धा, भक्ति को किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं होती और न उसे किसी प्रमाण की कसौटी पर कसना चाहिए। श्रद्धा, भक्ति, विश्वास तो भक्त और भगवान, प्रेम और प्रेमी के बीच का प्रेमरस है। यह व्यक्तिगत श्रद्धा, भक्ति और प्रेम, विश्वास का विषय है। श्रद्धा, प्रेम, भक्ति, आस्था—ये तर्क के विषय नहीं हैं।' वह तार्किक महाशय फिर भी तर्क करते रहे और साधु महाराज से कथा में हनुमान जी के आने का और उनके कथा सुनने का प्रमाण माँगते रहे और महाशय बोले—"महाराज जी! आपको यह प्रमाणित करना ही चाहिए कि हनुमान जी कथा सुनने आते हैं।"

उन महाशय की जिद को देखते हुए अंत में साधु महाराज ने कहा—"हनुमान जी कथा में आते हैं या नहीं—इसका प्रमाण मैं कल आपको दूँगा। कल कथा प्रारंभ होने से पूर्व हम एक प्रयोग करेंगे। हनुमान जी को मैं जिस आसन पर विराजने को कहता हूँ, आप उसको आज अपने घर ले जाना और कल उसे अपने साथ यहाँ ले आना। उसके बाद मैं वह आसन यहाँ रखूँगा। मैं कथा आरंभ करने से पूर्व हनुमान जी को उस पर विराजने को कहूँगा। कुछ समय बाद आप उस आसन को उठा कर देखना। यदि आपने वह आसन उठा लिया तो समझना कि हनुमान जी नहीं आए हैं।"

वह व्यक्ति इस कसौटी के लिए तैयार हो गया। महाराज ने कहा—"हम दोनों में से जो पराजित होगा वह क्या करेगा? इसका निर्णय भी कर लें। यह तो सत्य की, श्रद्धा की, आस्था की परीक्षा है।" उस व्यक्ति ने कहा—"महाराज! मैं उस आसन को नहीं उठा पाया तो मैं यह मान लूँगा कि उस आसन पर हनुमान जी विराजे हुए हैं, विराजमान हैं। तब मैं आपसे दीक्षा लेकर आपका शिष्य बन जाऊँगा। मैं आपको अपना गुरु मान लूँगा, पर महाराज! यदि आप पराजित हो गए तो आप क्या करेंगे?" साधु महाराज ने कहा—"मैं कथावाचन छोड़कर आपका सेवक बन जाऊँगा।"

अगले दिन कथा सुनने के लिए बहुत भीड़ एकत्रित हो गई। हजारों लोग श्रद्धा, भक्ति, प्रेम और आस्था की परीक्षा देखने आ पहुँचे। साधु महाराज अपने आसन पर आसीन हुए। उस तार्किक व्यक्ति ने वह आसन महाराज के हाथ में दे दिया। वह आसन उसी स्थान पर रखा गया, जहाँ कथा से पूर्व हनुमान जी को उस पर विराजित होने के लिए उसे रखा जाता था। महात्मा जी ने बड़े ही आर्त्तभाव से, श्रद्धाभाव से, नेत्रों में भर आए आँसुओं के साथ मंगलाचरण किया, हनुमान जी का अपने हृदय में ध्यान किया और फिर उस आसन पर विराजने के लिए हनुमान जी से प्रार्थना करते हुए करुण पुकार की—'आइए-आइए हनुमंत जी विराजिए, आइए-आइए हनुमंत जी विराजिए।'

यह गाते हुए उनके नेत्रों से अश्रुधारा चल पड़ी, उनके रोम-रोम पुलकित हो उठे। वह मन-ही-मन हनुमान जी से यह करुण पुकार करने लगे कि 'हे महाराज! हे हनुमंत जी महाराज! आज मेरी नहीं, आपकी ही परीक्षा है। मैं तो एक अकिंचन मात्र हूँ प्रभु! मैं तो एक साधारण व्यक्ति हूँ। मैं तो आपको बुलाना और पुकारना भी नहीं जानता। मैं तो मंत्र और प्रार्थनादि भी नहीं जानता। हे प्रभु! मैं तो भक्ति करना भी नहीं जानता। मैं सब प्रकार से हीन हूँ प्रभु! आज आप मेरी आस्था की लाज रखना प्रभु। मैं यह सब अपनी मान-बड़ाई के लिए नहीं कर रहा प्रभु। मैं तो सिर्फ और सिर्फ जगत् को यह सिखाना और बताना चाहता हूँ कि आप सर्वत्र हैं, सर्वज्ञ हैं और रामरस के रसिक हैं। इसलिए आप कथा में रामरस का पान करने अवश्य विराजते

हैं। एक तार्किक व्यक्ति ने मुझसे आपके कथा में विराजने का प्रमाण माँगा है, पर वह प्रमाण मैं कहाँ और कैसे दूँ प्रभो! इसलिए आज आप मेरी आस्था की लाज रख लो प्रभु!' फिर से साधु महाराज ने गाया—'आइए-आइए हनुमंत जी विराजिए। आइए-आइए कथा में हनुमंत जी पधारिए।'

इसके पश्चात महाराज जी कुछ देर शांत रहे, मौन रहे। सारी सभा भी शांत रही। अगले ही पल महाराज जी ने नेत्र खोले और बोले—"महाशय! अब आप आसन उठाइए।" उस व्यक्ति ने आसन उठाने के लिए हाथ बढ़ाया, पर आश्चर्य की बात यह हुई कि वह व्यक्ति उस आसन को उठाना तो दूर, उसे स्पर्श भी नहीं कर पा रहा था। उसने तीन बार हाथ बढ़ाया और तीनों बार वह आसन को स्पर्श भी नहीं कर पाया। महाराज जी के साथ-साथ वहाँ कथा-सत्संग में बैठे सभी लोग यह देख रहे थे कि उस व्यक्ति ने उस आसन को उठाने का बहुत प्रयास किया, पर वह उसे स्पर्श तक नहीं कर सका और वह पसीने से तरबतर हो गया। वह व्यक्ति समझ गया कि यह साक्षात् हनुमान जी का ही चमत्कार है।

यह हनुमान जी के कथा में आने, विराजने का प्रत्यक्ष प्रमाण है। उस व्यक्ति की आँखें भर आईं वह साधु महाराज के चरणों में गिर पड़ा और क्षमा-याचना करते हुए कहा—"महाराज! आपकी कृपा से मुझे कथा में हनुमान जी के विराजने का प्रमाण मिल गया। आपकी श्रद्धा, भक्ति के प्रताप से ही हनुमान जी कथा में विराजे। यह सब आपकी श्रद्धा का ही प्रताप है महाराज।"

उस व्यक्ति ने उनसे कहा—"आप जैसे संत का दर्शन और सान्निध्य पाकर मुझ जैसा अकिंचन भी अपने आप को बड़भागी मानता है महाराज। मेरा इरादा आपकी परीक्षा लेने का नहीं था, बल्कि अपने मन में उठ रहे प्रश्नों, संदेहों को दूर करने का था प्रभो! इसलिए आप मुझे क्षमा करें। मैं अपनी हार स्वीकार करता हूँ और आप जैसे संत को अपने गुरु के रूप में पाकर स्वयं को धन्य समझता हूँ।"

साधु महाराज ने स्नेह से उस व्यक्ति के सिर पर हाथ फेरा, उसे दीक्षा दी और वह व्यक्ति सच्चे शिष्य और भक्त की तरह अपने गुरु की सेवा करते हुए हनुमान जी की नित्य-उपासना, आराधना करने लगा। वहाँ उपस्थित सभी लोग बहुत प्रेरित और प्रभावित हुए और सभी साधु महाराज से दीक्षा लेकर हनुमान जी की आराधना में पूर्ण श्रद्धा-भक्ति के साथ जुट गए।

सचमुच श्रद्धा और भक्ति में बहुत शक्ति होती है। श्रद्धा की शक्ति अपार है। सच्ची श्रद्धा-भक्ति, प्रेम से प्रभु अवश्य प्रकट होते हैं, विराजते हैं, पधारते हैं और अपनी कृपा-प्रसाद से साधक को, भक्त को सराबोर कर देते हैं। प्रभु की मूर्ति पाषाण की होती है, पर भक्त की श्रद्धा-भक्ति से भगवान उस मूर्ति में आ विराजते हैं। वे सर्वत्र हैं, इसलिए उन्हें कहीं भी पुकारा और बुलाया जा सकता है। बस, मन में श्रद्धा-भक्ति, प्रेम प्रगाढ़ होना चाहिए। ❑

मनुष्य के ऊपर इन दिनों असुरता का आक्रमण हुआ है और सूर्य-चंद्र पर पड़ने वाली राहु-केतु की छाया की तरह ग्रहण लग गया है। यह असमंजस की घड़ी अधिक समय तक स्थिर नहीं रह सकती। अंधकार के बाद प्रकाश आता ही है। अब प्रभात के सूर्योदय का प्रकाश उदय होने में देर नहीं। उषाकाल की आभा प्राची में लालिमा बनकर प्रकट हो रही है। ***—परमपूज्य गुरुदेव***

मधुमक्खियों का रोचक संसार

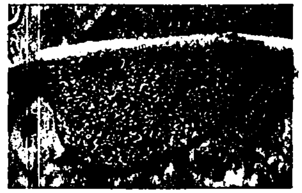

मधुमक्खी विश्व के सबसे महत्त्वपूर्ण एवं रोचक जीवों में से एक है और प्रकृति-पर्यावरण के संरक्षण में इसका उल्लेखनीय योगदान रहता है। साथ ही मधुमक्खी का मनुष्य जाति के साथ प्रारंभ से ही गहरा संबंध रहा है। यह एक उपयोगी कीट है और साथ ही प्रेरक भी। मालूम हो कि मधुमक्खियाँ भी दो तरह की होती हैं, एक पालतू और दूसरी जंगली।

पालतू मधुमक्खियाँ भी मूलतः दो प्रकार की होती हैं, एशिया मूल की एपिस सिराना इंडिका, जिन्हें देशी मधुमक्खी कहा जाता है और दूसरी इटेलियन एपिस मैलिफेरा, जो प्रमुखतया विदेशी मूल की है।

जंगली वर्ग में पहाड़ी मधुमक्खी, एपिस डोरसाटा और छोटी मधुमक्खी एपिस फ्लोरिया आती हैं। इन्हें कुछ-कुछ पालतू बनाया जा सकता है, लेकिन इनका एक ही परत का छत्ता बनता है, जिसमें थोड़ा-सा ही शहद निकलता है।

इनके अतिरिक्त बंबल-बी भी एक अन्य जंगली प्रजाति है। भारतीय मधुमक्खी स्वभाव से नम्र व पालतू प्रवृति की होती है। यह अँधेरे स्थानों में समानांतर छत्तों का निर्माण करती है। इनके छत्ते मकानों के आलों, चिमनियों, पेड़ों के कोटरों, खंडहर के खोखले स्थानों तथा गुफाओं की छतों पर पाए जाते हैं।

इनके एक छत्ते से प्रतिवर्ष औसतन 8 से 10 किलो शहद निकलता है। एक मधुमक्खी औसतन 3 किमी के दायरे से परागकण एकत्र करती है। मालूम हो कि एक चम्मच शहद 12 मधुमक्खियों के जीवनभर के अथक श्रम का परिणाम होता है।

एक मधुमक्खी का कुल जीवन मात्र 45 दिन का होता है और एक किलो शहद बनाने के लिए पूरे छत्ते को लगभग 4000000 फूलों का रस चूसना पड़ता है और 90000 मील उड़ना पड़ता है। मधुमक्खी की एक कॉलोनी में 50 से 60 हजार मधुमक्खियाँ होती हैं, जिनमें से एक रानी मधुमक्खी होती है। शहद निकालने के लिए एक बार में 50 से 100 फूलों पर मँडराकर रस निकालती है। एक मधुमक्खी अपने पूरे जीवनकाल में एक चम्मच का 12वाँ हिस्सा शहद तैयार करती है।

मधुमक्खियों के छत्ते में मुख्यतः 3 प्रकार के सदस्य होते हैं—श्रमिक, नर या निखट्टू (ड्रॉन) और रानी। श्रमिक ही फूलों से शहद एकत्र करने का काम करती है। निखट्टू कोई कार्य नहीं करता, उसका कार्य मात्र प्रजनन में सहयोग करना होता है। रानी का काम प्रजनन रहता है। एक बार में वह 2000 तक अंडे दे सकती है। जब परागकण अधिक रहते हैं, तो अधिक अंडे देती है और जब ये कम रहते हैं तो कम अंडे देती है। श्रमिक की आयु औसतन 6 सप्ताह होती है, वहीं रानी मधुमक्खी की आयु 3 वर्ष रहती है। निखट्टू प्रजनन के बाद मर जाता है।

मधुमक्खियों की संख्या जब बढ़ती है तो ये नया समूह बनाती हैं और नए छत्ते का निर्माण करती हैं। सिराना की कॉलोनी में औसतन 20000 तक मधुमक्खियाँ रहती हैं। जब वसंत ऋतु में पुष्पों की बहार रहती है, ब्रूड अर्थात छोटे बच्चों के लिए

आहार बहुतायत में उपलब्ध होता है, तो उस समय ये बँटवारा करती हैं। इस तरह ठीक फूलों के समय ही बँटवारा होता है, आगे-पीछे नहीं।

मधुमक्खियाँ ठंढ के प्रति संवेदनशील रहती हैं। हालाँकि पहाड़ी मधुमक्खियाँ पर्याप्त ठंढ को बरदाश्त कर लेती हैं और ठंढ में भी सक्रिय रहती हैं, वहीं इटेलियन अधिक ठंढ नहीं झेल पातीं। शहद औषधीय गुणों से भरपूर रहता है, जिसमें अमुक पौधे के औषधीय गुण विद्यमान रहते हैं। शहद के कई सह-उत्पाद भी हैं, जो इसे विशिष्ट बनाते हैं।

रॉयल जेली, प्रोपोलिस, मोम इसके मुख्य उत्पाद हैं, जिनमें रॉयल जैली को पौष्टिकता की दृष्टि से बेशकीमती माना जाता है। रानी मक्खी का यही मुख्य आहार रहता है। इसके साथ बी-वेनम अर्थात मधुमक्खी का विष भी बहुत कीमती रहता है। आजकल परागकण को भी एकत्र किया जा रहा है, जिसे उच्च प्रोटीनयुक्त उत्पाद माना जाता है और यह औषधीय गुणों से भरपूर रहता है। इसे संगृहीत कर सरदियों में मधुमक्खियों को आहार के रूप में भी दिया जाता है।

मधुमक्खियाँ प्रकृति-पर्यावरण चक्र की अहम घटक हैं और ये पॉलिनेशन अर्थात परागकण-प्रक्रिया में केंद्रीय भूमिका निभाती हैं। इनके बिना वृक्ष-वनस्पतियों एवं जैव-विविधता की कल्पना भी नहीं की जा सकती। शहद बनाने के लिए जिस परागकण की आवश्यकता होती है, उसके लिए मधुमक्खियाँ फूलों पर मँडराती हैं, इस प्रक्रिया में इनके पैरों में परागकण चिपक जाते हैं और जब ये मधुमक्खियाँ दूसरे फूलों पर बैठती हैं, तो इनके पैरों में लगे परागकण दूसरे फूलों में गिरकर परागकण का कारण बनते हैं, जिससे फूलों से फल बनने का मार्ग प्रशस्त होता है।

आज शहद की आवश्यकता को देखते हुए इसका व्यापार बड़े स्तर पर हो रहा है। कुछ लोग जंगलों में जाकर इनके छत्तों को काटकर, इनके आशियानों को तबाहकर बेरहमी के साथ शहद निचोड़ते हैं, जिसमें कितने सारे इनके बच्चों व अंडों का नाश होता है, जो पूरी तरह से हिंसक एवं निर्मम प्रक्रिया रहती है।

कुछ लोग अपने खेतों या बगीचों में कृत्रिम रूप में इनके छत्तों को लगाते हैं और इनके लिए लगी फ्रेमों में एकत्र शहद को समय-समय पर निकालते हैं। इस तरह का व्यवसाय भी कितना सही या गलत है, ये भी विचारणीय है। यदि मधुमक्खियों के पेट को काटकर उनकी मेहनत के फल का शोषण कर रहे हैं, तो इसे बहुत उचित नहीं ठहराया जा सकता। इसे गोपालन के उदाहरण से भी समझा जाता है।

वैदिक परंपरा में गाय से दूध निकालने की प्रक्रिया को दुहना कहते हैं, जिसका अर्थ होता है कि गाय के दो थन के दूध को ही लिया जाता था और शेष दो थन के दूध को बछड़ों के लिए छोड़ा जाता था। यह एक आदर्श मानक था, लेकिन गाय से अधिक-से-अधिक दूध निकालने के लोभ में आज कितने गोपालक इस मानक का पालन करते हैं।

इससे भी एक कदम आगे बढ़कर गाय से अधिक दूध निकालने के लिए स्टिरॉयड के इंजेक्शन तक का उपयोग किया जा रहा है, जिससे कि लगातार इनसे दूध लिया जा सके। दूध के लिए इस तरह के अप्राकृतिक व्यवहार एवं ज्यादती को किसी भी रूप में सही नहीं ठहराया जा सकता। इस तरह का दूध ग्राहकों के लिए भी हानिकारक ही साबित होता है।

इसी तरह शहद के छत्तों से शहद निकालने के अमानवीय एवं क्रूर तरीकों को समझा जा सकता

है। मधुमक्खियों का पालन एक व्यवसाय के साथ सेवा-संरक्षण के भाव से भी किया जा सकता है। मधुमक्खियों के इन बक्सों में 10 में यदि 3-4 फ्रेम से अपने काम के लिए शहद निकालते हैं, शेष इनके लिए, तो यह एक समझदारी वाला संवेदनशील कदम माना जाएगा। इसमें एक ओर इस मासूम और श्रमशील जीव के प्रति सेवा-संरक्षण का कार्य और दूसरी ओर सेवा-साधना के रूप में इनका पालन संभव होगा।

औसतन एक छत्ते से एक-तिहाई शहद लेने व शेष दो-तिहाई मधुमक्खियों व इनके बच्चों के लिए छोड़ने का मानक एक व्यावहारिक आदर्श माना जा सकता है। इसे मधुमक्खी पालन का एक समावेशी एवं संवेदनापूर्ण आध्यात्मिक प्रयोग कह सकते हैं।

इसका अधिक-से-अधिक प्रसार करने की आवश्यकता है। संवेदना से हीन कोरे व्यवसाय का अमानवीय मॉडल उचित नहीं, मानवीय गरिमा के अनुरूप वरेण्य भी नहीं। शहद जैसी अमृत औषधि के साथ अथक श्रम की प्रेरणा देने वाले इस नन्हें से कीट का संरक्षण हमारा कर्त्तव्य बनता है।

इसी में हमारे स्वास्थ्य, प्रकृति-पर्यावरण संरक्षण एवं सामूहिक सुख-शांति का मर्म निहित है। ❑

गुरु-शिष्य भ्रमण को निकले। उन्हें राह में एक हाथी मिला, जो एक रस्सी से खूँटे से बँधा खड़ा था। उत्सुकतावश शिष्य ने महावत से पूछा—"बंधु! यह रस्सी तो पतली-सी है और यह विशाल हाथी जब चाहे तब इसे तोड़कर मुक्त हो सकता है, फिर यह भागता क्यों नहीं?"

महावत बोला—"जब यह हाथी छोटा था, तब यही रस्सी इसे बाँधने के लिए पर्याप्त थी और अब इसके पूर्व अनुभव इसे यह आभास ही नहीं होने देते कि यह रस्सी इतनी मजबूत नहीं कि इसे रोक सके।"

वार्त्तालाप सुन गुरु हँसे और बोले—"मनुष्य की जीवात्मा भी तो इसी हाथी के समान है। वह परमात्मा का अंश है और यदि चाहे तो भव-बंधनों को ठुकराकर दिव्यता की ऊँचाइयों को प्राप्त कर सकता है, पर चित्त पर जमे संस्कार माया का ऐसा आवरण बनाते हैं कि वह अपने सच्चे स्वरूप को भूलकर एक दीन-दरिद्र का जीवन गुजारता रहता है।"

प्रेम

हम सब के भीतर प्रेम है यह इस बात का सूचक है कि हम मनुष्य हैं। हमें प्रकृति ने वह दिया है, जो अन्य प्राणियों को नहीं दिया अर्थात प्रेम का उपहार। प्रेम भावनाओं से अति-परे है, प्रेम वास्तविकता का स्वरूप है। इसे वही व्यक्ति समझेगा जो प्रेम-रस से परिपूर्ण होकर इस जीवन की धन्यता, पात्रता एवं अनुकंपा को अनुभव करे।

प्रेम के दिव्यामृत से ही सृष्टि में सौंदर्य है तथा प्रेम वह महान औषधि है, जो एक बार ग्रहण कर ली जाए तो महान परिवर्तन की रूपरेखा तैयार कर देती है। प्रेम में अग्नि-सदृश पवित्रता है, उसमें संसार का अमृत छिपा हुआ है। वह किसी भी प्रकार विकृत नहीं किया जा सकता तथा उसे पाने के लिए महान त्याग, तप एवं तितिक्षा का जीवन बिताना पड़ता है।

प्रेम से मनुष्य महान बनता है, तो उसका समाज आदर्श प्रेरणा का वाहक। प्रेम में वह शक्ति है कि वह इस संसार को घनीभूत कर दे, इसके सारे विकारों को जला डाले तथा परम की अभीप्सा से प्रत्येक मानव-प्राणी का जीवन सरस बना दे। प्रेम के ही महान तत्त्व से धरती, तारे, आकाश तथा उपवन रोशन हैं तथा जीवनरूपी वृक्ष पर प्रेम की ही डाल पर जीव-जगत् लहलहा रहा है।

इसलिए सर्वप्रथम इस प्रेम को समझते हैं, जिसके प्रभाव से मानव-जन्म सार्थक बनता है तथा एक दिव्य अभीप्सा से अभिपूरित हो जाता है। किसी ने प्रेम का अर्थ कुछ भी किया हो, परंतु उसे सही रूप में समझने के लिए चाहिए एक अनोखी दृष्टि, जिसे अंतर्दृष्टि कहा जाता है।

यह जिसके पास है, वह प्रेम के अमृत से वंचित नहीं रह सकता तथा उसे महान कल्याण के पथ पर चलने में कोई बाधा नहीं रह जाती। हमारे जीवन का साररूप प्रेम ही है, उसे जिसने भी देखा, परखा-समझा एवं उसकी महत्ता से स्वयं प्रकाशित हो औरों में उसे प्रज्वलित स्वरूप देने की दिशा में बढ़ा, वह व्यक्ति प्रेम के पयपान से स्वयं तो धन्य हुआ ही, साथ में उसने अन्यों को भी प्रकाश एवं संवेदना से अभिपूरित किया।

तमेव विद्वान न विभाव मृत्योः।

अर्थात उस आत्मा को जान लेने वाला मनुष्य मृत्यु को जीत लेता है।

प्रेम इस जगत् का सार-तत्त्व है एवं उसे वही व्यक्ति समझेगा, जिसने अपनी अंतरात्मा का समर्पण किया हो, जो पूर्ण निर्मुक्त हुआ इस जीवन की वास्तविक-संपदा से परिचित हो गया हो। उसका जीवन रोम-रोम से प्रेम की ही अभिकिरणों को संचारित करता दिखाई देगा।

ऐसा तभी होता है जब आत्मिक लगन अपने संपूर्ण बल से, अपने आवेग की ध्वनित तरंगों से तथा जीवन में महान परिष्कार द्वारा आगे बढ़े तथा प्रेमरूप महान धरोहर को स्वीकार कर इस जीवनतत्त्व से निहाल हो जाए। हमें प्रेम का गुणगान करना चाहिए, सदा उसे ही सुशोभित कर प्राणपण से अपने सदुद्देश्य के प्रति जुट पड़ना चाहिए; क्योंकि प्रेम के बिना जीवन संभव नहीं है। ❑

अहंजनित क्रोध के आवेश से रहें सावधान

जीवन समायोजन का नाम है, मिल-जुल कर, सहयोग-सहकार के साथ आगे बढ़ने का अवसर है। जिसने परिस्थितियों के अनुरूप ढलना सीख लिया, दूसरों से तालमेल बिठाते हुए काम करना सीख लिया, समझो वह जीवन जीने की कला का खिलाड़ी बन चला।

हालाँकि यह कला जीवन से सूक्ष्म समझ की माँग करती है और अनुभव के साथ जीवन का हिस्सा बनती है। जो इस कला को नहीं समझ-सीख पाया, समझो वह अभी अनाड़ी ही रह गया, लेकिन वह चाहे तो इस कला को सीख सकता है, अन्यथा जीवन का असंतोष-अशांति एवं शिकायतों से भरा रहना तय है।

ऐसे में अहंमन्यता, खीझ एवं क्रोध-आवेश जीवन के अंग बन चले तो कोई आश्चर्य नहीं। जब हम दुनिया को अपनी उँगली पर नचाना चाहते हैं, सोचते हैं कि सब हमारे इशारे पर चलें; हम नहीं बदलेंगे, लेकिन लोग बदलें—ऐसी अहंमन्यता तथा इससे उपजा क्रोध-आक्रोश दूसरों के साथ तो संबंध बिगाड़ ही देता है, स्वयं के लिए भी घातक साबित होता है, विनाशक बनता है। ऐसे में कोई थोड़ा-सा भी कुछ कह दे, तो मन में क्रोध का ज्वार उफान मारने लगता है। आपा आवेशग्रस्त हो जाता है, व्यवहार तुनक जाता है।

वास्तव में अपने बारे में कटु सत्य को सुनने को तैयार नहीं हो पाना और व्यापक हित में कही गई बात को स्वीकार नहीं करना—ये एक अपरिपक्व व्यक्तित्व की निशानी ही कहे जाएँगे। स्वयं की पूरी जिम्मेदारी न उठा पाने के साहस का अभाव, स्वयं का ईमानदार मूल्यांकन न कर पाना, ये जीवन की प्रगति के मार्ग को अवरुद्ध करते हैं, व्यक्तित्व को पूर्णतया विकसित होने से रोकते हैं।

जीवन समायोजन का नाम है, महत्तर उद्‌देश्य के लिए अपने स्वार्थ व अहंकार का विसर्जन करते हुए मिलकर काम करने का नाम है। अपने सत्य को स्वीकारते हुए, स्वयं की कमियों को सुधारते हुए आत्मपरिष्कार करना ही जीवन-साधना है।

जीवन में विराट लक्ष्य का हिस्सा बनते हुए आगे बढ़ने से जहाँ सामूहिक जीवन का महान उद्‌देश्य पूरा होता है, वहीं इससे स्वयं का भी हित सधता है। निष्काम भाव से सामूहिक हित का हिस्सा बनते हुए जहाँ समाज की सच्ची सेवा बन पड़ती है, वहीं आत्मकल्याण का मार्ग भी प्रशस्त होता है।

यहाँ अहंकार व स्वाभिमान में भेद को समझना आवश्यक हो जाता है। अहंकार में व्यक्ति अपने संकीर्ण स्वार्थ पर केंद्रित होता है और उसमें दूसरों से श्रेष्ठ होने का भाव रहता है तथा अपनी मनमानी पर उतारू रहता है, जिसमें औचित्य पर ध्यान नहीं रहता; जबकि स्वाभिमान एक आत्मिक गुण है, जिसमें जीवन के सत्य व औचित्य का सम्मान निहित रहता है। इसमें औचित्य के आधार पर निर्णय लिया जाता है, जिसमें चाहे अपने अहंकार पर ही चोट क्यों न पहुँच रही हो।

अहंकार में व्यक्ति अपनी कमियों को स्वीकार नहीं कर पाता, जबकि स्वाभिमानी व्यक्ति इन्हें स्वीकारते हुए, इनसे आवश्यक शिक्षा लेते हुए आगे बढ़ता है। इस तरह स्वाभिमानी व्यक्ति अपने अहंकार

को गलाकर भी औचित्य की रक्षा करता है, लेकिन अपने स्वाभिमान पर चोट नहीं पहुँचने देता।

ऐसे में व्यक्ति अहंजनित क्रोध के स्थान पर मन्यु अर्थात स्वस्थ क्रोध को वरण किए होता है और अपने सत्य के प्रति सजग रहता है तथा अपना मानसिक संतुलन नहीं खोता। जबकि अहंकार के कारण क्रोध के आवेश की स्थिति में व्यक्ति अपना संतुलन खो बैठता है, इस दशा में व्यक्ति की बुद्धि कुछ देर के लिए भ्रमित हो जाती है और वह गलत निर्णय ले बैठता है।

वाणी के बिगड़े बोल व्यवहार को असामान्य बना देते हैं, जो इसकी गरिमा के अनुरूप नहीं होते, जो बाद में होश आने पर पश्चात्ताप का ही कारण बनते हैं। सभ्य समाज में भी ऐसा आचरण-व्यवहार स्वीकार्य नहीं होता और अहंकारी व्यक्ति अपने व्यक्तित्व की गरिमा को क्षीण कर बैठता है तथा उसका चरित्र संदिग्ध बनता है।

अहंमन्यता ही प्रकारांतर में व्यवहारजन्य समस्या के रूप में सामने आती है। व्यक्ति तुनक-मिजाज हो जाता है। अपने विपक्ष में कुछ भी सुनने को तैयार नहीं रहता, चाहे वह सत्य ही क्यों न हो। ऐसे व्यक्ति का जीवन व्यावहारिक स्तर पर तात्त्विक रूप में असफल ही रहता है।

हो सकता है कि वह परिस्थितियों के संयोगवश अभी किसी उच्च भूमिका में हो तथा लोग भयवश सम्मान करते दिखते हों, लेकिन वास्तव में वे उससे बचते हैं, पीठ पीछे उसका मूल्यांकन हलका ही करते हैं। उसे यथार्थ सम्मान का अधिकारी नहीं मानते। जीवन के सर्वांगीण उत्कर्ष के लिए इस अहंमन्यता एवं क्रोधजनित आवेश से बाहर निकलना आवश्यक है, तभी हम न्यूनतम समायोजन के आधार पर एक तालमेल भरा सफल जीवन जी सकते हैं।

जब कभी अहंजन्य आवेश एवं क्रोध की स्थिति में उलझें, तो इनसे उबरने के लिए कुछ सूत्रों का अनुसरण कर सकते हैं। सर्वप्रथम, किसी भी चीज को अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न न बनाएँ, उसमें औचित्य का ध्यान रखें। सत्य को अपने निर्णय का आधार बनाएँ।

अपने अहंकार की सूक्ष्म चालों को समझें, आवेशग्रस्त न हों। इसको संतुलित करने के तौर-तरीकों को सीखें। साथ ही जीवन के विद्यार्थी बनें, नित्य स्वाध्याय करें। इससे अहंकार के खेल को समझने में सहायता मिलेगी और इसके प्रबंधन के नित नए सूत्र हाथ लगेंगे।

यह भी सत्य है कि औचित्य के पक्ष में अहंकार की फुफकार भी आवश्यक हो सकती है, लेकिन वास्तव में किसी से न उलझें। पाप से घृणा, पापी से नहीं की उक्ति का ध्यान रखें। इस समझ को विकसित करने के लिए सद्गुरु के सत्संग एवं ध्यान के पलों में अपने चित्त की गहराई में उतरें, स्वयं को ईश्वर को अर्पित करते हुए, आत्मसत्ता के प्रकाश में चित्त को शुद्ध करें।

त्रयो धर्मस्कन्धा यज्ञोऽध्ययनं दानमिति।

—छांदोग्योपनिषद्, 2/23/1

अर्थात धर्म के तीन आधार हैं—1.यज्ञ 2. अध्ययन एवं 3. दान।

वाणी-व्यवहार में आत्मप्रशंसा व शेखी से बचें और छिद्रान्वेषण तथा परदोषारोपण जैसे दुर्गुणों से दूर ही रहें तथा पीठ पीछे किसी की बुराई की कुचेष्टा से बचें और अपने कर्त्तव्य कर्म में व्यस्त रहें। एकांत शांत पलों में स्वयं का गहराई से अवलोकन करें। अपने क्रोध व आवेश की जड़ों में अहंकार की सूक्ष्मभाया समझ में आने लगेगी। इसके निग्रह के सूत्र हाथ लगेंगे।

दूसरों के साथ समायोजन सहज होने लगेगा तथा परिवेश एवं समाज के साथ न्यूनतम तालमेल बिठाते हुए जीवन सर्वांगीण उत्कर्ष की सीढ़ी पर तप व योग के सहारे आगे बढ़ता दिखेगा। ❑

पूज्य गुरुदेव जैसा मैंने देखा-समझा-26

यति और योद्धा की प्रवृत्तियों से संपन्न एक समर्थ प्रतिमा

यति और योद्धा का सम्मिश्रण कदाचित् ही कहीं देखा जाता होगा। कारण कि यति की कोमलता, करुणा उसे दयालु, क्षमा, शील, उदार प्रकृति का बनाए रहती है। ईश्वर का विश्वासी अक्सर ईश्वर पर इतना निर्भर हो जाता है कि अपने कर्त्तव्य-कर्मों का होना-न-होना भी ईश्वर-इच्छा पर छोड़ देता है और जो कुछ हो रहा है सो ठीक मान लेता है, काम न बन पड़े तो क्या करें ? इस प्रकार अपने मन को समझा लेता है।

वे न तो किसी से लड़ पाते हैं और न कोई बड़ा दुस्साहस करने लायक संकल्प ही कर पाते हैं। जबकि ये दोनों ही आधार आत्मिक विकास और लोक-मंगल का व्यवस्था क्रम बनाए रहने के लिए नितांत आवश्यक हैं।

आमतौर से यह माना जाता है कि जो आध्यात्मिकता के क्षेत्र में चला गया, वह बाह्य क्षेत्र के लिए निरर्थक हो गया; क्योंकि संसार तो संघर्ष से चलता है, यहाँ हर किसी को हर कदम पर जीवन धारण किए रहने के लिए संघर्ष करना पड़ता है। प्रगति के लिए तो वह अनिवार्य है। चाहे आत्मिक हो, चाहे भौतिक दोनों ही दिशाएँ ऐसी हैं, जो अपने-अपने ढंग के संघर्ष चाहती हैं।

आत्मिक जीवन में अपने-अपने दोष-दुर्गुणों, कुसंस्कारों और प्रलोभनों-अवरोधों से लड़ना पड़ता है। गीता का प्रशिक्षण ही अंतरंग जीवन में पाँच प्राणों को, 100 दोष-दुरितों के कौरव-पांडवों के रूप में लड़ा देने के लिए प्रादुर्भूत हुआ।

आत्मिक साधना को भी समर कहा गया है। दुर्गा सप्तशती में महिषासुर, मधु-कैटभ और शुंभ-निशुंभ के रूप में स्थूल, सूक्ष्म और कारणशरीर में घुसे बैठे असुरों को आत्मशक्ति द्वारा निरस्त करने की शिक्षा है।

इस प्रकार से संघर्ष आत्मिक प्रगति का भी प्रमुख आधार है। भौतिक जीवन का तो कहना ही क्या ? यहाँ प्रगति तो दूर अपने अस्तित्व को बनाए रह सकना भी बिना संघर्ष संभव नहीं। इस दुनिया में देवताओं से अधिक असुर हैं। वे हर घड़ी घात लगाए रहते हैं और जो दुर्बल गाफिल पाया जाता है, उसे ही धर दबोचते हैं।

आँख से न दिखने वाले रोग-कीटाणुओं से लेकर मक्खी, मच्छर, खटमल, पिस्सुओं तक और साँप-बिच्छुओं से लेकर सिंह-व्याघ्रों तक अन्य जीव-जंतु जब आक्रामक बने बैठे हैं तो मनुष्य वेशधारी असुरों का तो कहना ही क्या ? वे कमजोर और गाफिल की तलाश करते फिरते हैं और जो संघर्ष करने से कतराता है, उसे ही धर दबोचते हैं।

प्रगति के लिए तो इंच-इंच रास्ता बनाना पड़ता है। सफलताएँ उपहार में किसी को नहीं मिलीं। प्रचंड मनोबल और प्रखर पुरुषार्थ के मूल्य पर उन्हें खरीदा ही जाता है। इस संसार में आगे बढ़ने और जीवित रहने की राह यही है, पर यति लोग अपने दार्शनिक रुझान के कारण इन दोनों ही विशेषताओं से खाली हो जाते हैं। फलतः उनकी प्रगति रुकी ही

पड़ी रहती है। न वे आत्मिक दिशा में आगे बढ़ पाते हैं और न भौतिक क्षेत्र में। प्रगति के आधार ही जब गँवा दिए गए तो फिर उपलब्धि कैसी?

विचारशील लोग वर्तमान अध्यात्म की चिंतन शैली को इसलिए प्रतिगामी मानते हैं कि वह प्रगति का पथ अवरुद्ध करती है। मिथ्या संतोष पैदा करके आशा की ज्योति ही बुझा देती है। 'स्व' को खोकर एक प्रकार से ऐसे व्यक्ति परावलंबी हो जांते हैं, जबकि होना ठीक उलटा चाहिए था। ❑

एक बार मगध नरेश ने कौशल प्रदेश पर हमला कर दिया। युद्ध में कौशल नरेश की हार हुई।

कौशल नरेश ने मगध के राजा के समक्ष प्रस्ताव रखा कि उनके साथ के 15-20 व्यक्तियों को वे जाने दें, शेष के साथ वे यथोचित व्यवहार करने को स्वतंत्र हैं। मगध नरेश ने इस प्रस्ताव के लिए हामी भर दी।

कुछ समय पश्चात कौशल नरेश 20 व्यक्तियों को विदा कर सपरिवार युद्ध-बंदी के रूप में मगध के राजा के सामने आकर खड़े हो गए। मगध के राजा ने सोचा कि कौशल नरेश स्वयं भोगेंगे तो उन्हें सामने पाकर वे बड़े आश्चर्यचकित हुए।

उन्होंने पूछा—"वे कौन थे, जिनके जीवन की सुरक्षा के लिए आपने स्वयं को बंदी बनवा लिया।"

कौशल नरेश बोले—"राजन् ! वे सभी हमारे राज्य के विद्वान व संत थे, राज्य की पहचान उस राज्य के आदर्शों, मूल्यों, सत्कार्यों व संस्कारों से होती है। मैं भले मारा जाऊँ, पर इन परंपराओं को जीवित रखने के लिए उनका जीवित रहना आवश्यक था।"

मगध नरेश यह सुनकर हतप्रभ रह गए और बोले—"जिस राज्य में धर्म, दया व परोपकार का इतना ऊँचा स्थान है, उस पर आधिपत्य का दुस्साहस मैं कैसे कर सकता हूँ।" उन्होंने कौशल नरेश को ससम्मान मुक्त कर दिया।

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

आप को सादर प्रणाम

Shantikunj Rishi Chintan के विडियो को अपने मित्रों के साथ शेयर जरूर करें।

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel के वीडियो युग निर्माण मिशन के लिए समर्पित है! हमारा एकमात्र उद्देश्य परम पूज्य गुरुदेव के विचारों को जन-जन तक पहुंचाने का है।

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

आप भी हमारे साथ जुड़ कर इस विचार क्रांति योजना में सहभागी अवश्य बनें।

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel को **Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये** और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

धन्यवाद

☞ शांतिकुंज हरिद्वार के Official WhatsApp Channel awgpofficial Shantikunj चैनल को Follow करने के लिए Link पर Click करें https://whatsapp.com/channel/0029VaBQpZm6hENhqlhg453J

Shantikunj WhatsApp:- शांतिकुंज की गतिविधियों से जुड़ने के लिए 8439014110 पर अपना नाम लिख कर WhatsApp करें

All World Gayatri Pariwar Official Social Media Platform

Official Facebook Page:- https://www.facebook.com/awgpofficial

Official Twitter:- https://twitter.com/awgpofficial

https://twitter.com/DrChinmayP

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

Official Instagram:- https://www.instagram.com/awgpofficial

Official Telegram:- https://t.me/awgpofficial

https://t.me/shantikunjrishichintan

https://t.me/awgpofficialgroup

Youtube Channel:- https://www.youtube.com/c/RishiChintan

https://www.youtube.com/c/shantikunjvideo

AWGP Official Website:- http://www.awgp.org/

http://literature.awgp.org

Rishi Chintan

बढ़ें बुलंदियों के पार

मानव जीवन इस सृष्टि का सबसे बेशकीमती उपहार है; क्योंकि इसमें विकास की असीम संभावनाएँ विद्यमान हैं। दूसरी योनियों की भी अपनी विशेषताएँ हैं, जो प्रकृति के नियमों के अधीन एक सहज जीवनयापन करती हैं, लेकिन विकास की प्रक्रिया यहाँ स्वचालित होती है और सीमित रहती है। यहाँ गलतियों की, असफलताओं की संभावनाएँ कम होती हैं, लेकिन विकास की गुंजाइश भी कम रहती है।

किसी शेर या गाय को कभी कोई गलती करते हुए नहीं देखा जाता, न ही प्रायश्चित और सुधार करते हुए पाया जाता, लेकिन साथ ही वे किसी नए ज्ञान-विज्ञान का सृजन करते नहीं देखे जाते, न ही किसी तरह के आत्मबोध या मोक्ष को प्राप्त होते पाए जाते हैं। यह सिर्फ मनुष्ययोनि में ही संभव है, देवताओं को भी स्वर्ग में अपने भोग भोगकर मोक्ष के लिए धरती पर मानव शरीर धारण करना पड़ता है।

मानव जीवन में अपनी अंतर्निहित दिव्यता के कारण हर व्यक्ति में उत्कृष्टता और पूर्णता की चाह नैसर्गिक रूप में विद्यमान रहती है, लेकिन इस शिखर तक का आरोहण सीधे मार्ग से न होकर टेढ़े-मेढ़े मार्ग से होकर होता है। माउंट एवरेस्ट या किसी भी पर्वत शिखर तक पहुँचने के लिए कई पड़ावों से होकर गुजरना पड़ता है, जिसमें समतल घाटियों से लेकर गहरी खाइयों, कंदराओं-गुफाओं, हिमनदियों, खड़ी चढ़ाई, चट्टानी पड़ावों, फिसलन भरी ढलानों को पार करना पड़ता है।

राह में पर्वत शिखर के दर्शन कर पथिक रोमांचित हो सकता है कि मंजिल के दर्शन हो चले और वो सामने दिख रही है, लेकिन फिर बीच के उपरोक्त पड़ावों के बीच मंजिल दृष्टि से ओझल हो जाती है।

कभी-कभी तो लग सकता है कि हम पीछे हट रहे हैं, नीचे जा रहे हैं, मंजिल के विपरीत चल रहे हैं, लेकिन यदि दिशा सही है, मंजिल स्पष्ट है, तो हर फिसलन, हर गिरावट, हर विचलन भी पथिक को मंजिल की ओर ही ले जा रही होती है और अंत में यह धैर्य, निष्ठा और एकांतिक प्रयास पथिक को शिखर तक पहुँचाकर ही रहते हैं तथा सफलता का झंडा बुलंद हो जाता है।

यही कुछ जीवन की कहानी है। इसमें असफलता, गलतियाँ, भूल-चूकें सब यात्रा का हिस्सा हैं। जीवन के निर्माण में, चरित्र के गठन में, सफलता के अर्जन में, विभूतियों के जागरण एवं विकास में, खोदी खाइयों को पाटने के क्रम में रास्ता इन्हीं विघ्न-बाधाओं व अनिवार्य सोपानों से होकर गुजरता है और यात्रा को रोचक तथा रोमांचक बनाता है।

स्वामी विवेकानंद जी ने क्या खूब कहा है कि ये गलतियाँ जीवन का सौंदर्य हैं। यदि ये न होतीं तो आज हम सफलता एवं उत्कृष्टता की इन बुलंदियों पर नहीं होते। इनका खुले दिल से, हाथ फैलाकर स्वागत करें। इनसे आवश्यक सबक लेते हुए आगे बढ़ें, मंजिल मिलकर रहेगी।

आखिर चरित्र का निर्माण एक दिन में नहीं होता, हजार ठोकरें खाने के बाद ही इसका गठन होता है। यदि आप एक आदर्श के साथ हजार

गलतियाँ करोगे, तो मानकर चलें कि बिना आदर्श के ये गलतियाँ कई गुना हजार अधिक होंगी। अत: जीवन में उच्च आदर्श का होना आवश्यक है, जीवन लक्ष्य का स्पष्ट होना अभीष्ट है।

फिर हर असफलता हमें मंजिल के समीप लाती है, सफलता के मार्ग को सरल बनाती है। क्योंकि हर असफलता व भूल-चूक से मिले सबक हमें अधिक समझदार व संजीदा बनाते हैं और हम एक नई अंतर्दृष्टि एवं अधिक समग्रता के साथ जीवन के मार्ग का संधान करते हैं। बस, असफलताओं से, गलतियों से घबराएँ नहीं। इन्हें सफलता का आवश्यक सोपान मानते हुए आगे बढ़ते रहें।

कई व्यक्ति असफलता से घबराकर प्रयास ही नहीं करते। शुरुआती कदम ही नहीं उठाते, जो जीवन की एक भयंकर भूल होती है; क्योंकि हजार मील की यात्रा एक कदम से ही शुरू होती है। आवश्यकता मंजिल को निर्धारित करने तथा पहला साहसिक कदम उठाने भर की होती है। फिर हर कदम के साथ आगे का पथ स्वत: ही स्पष्ट होता जाता है और मंजिल की ओर कदम बढ़ने लगते हैं। निस्संदेह रूप में अनंत धैर्य एवं अध्यवसाय के साथ राह में डटे रहना पड़ता है, तभी राह की हर असफलता जीवन का शृंगार बनती हुई अंतत: परम विजय को सुनिश्चित करती है।

इस तरह एक सफल और एक असफल व्यक्ति में एक ही अंतर होता है। एक गलतियों व असफलता के भय के चलते पहला कदम ही नहीं उठा पाता तथा बुलंदी की मात्र कल्पना करता रह जाता है। दूसरा साहस के साथ पहला कदम उठाता है और गलतियों व असफलता की परवाह किए बिना सतत आगे बढ़ता रहता है। इस तरह गलती होने के भय से प्रयास ही नहीं करना, जीवन के भय का सामना ही नहीं करना एक आधे-अधूरे जीवन का निमंत्रण है।

जबकि विकास की सकल संभावनाएँ जीवट का इंतजार कर रही होती हैं, लेकिन बिना साहसिक कदम बढ़ाए, उनसे मुलाकात कैसे होगी और कुछ लोग गलती करने पर फिर कुढ़ते रहते हैं, घुटते रहते हैं, ग्लानि-बोध से ग्रस्त पाए जाते हैं, जो किसी भी रूप में उचित नहीं। यह कुढ़न ग्रंथियों के रूप में व्यक्ति की ऊर्जा को बरबाद करती है। नकारात्मक ग्रंथियों में जीवन-ऊर्जा उलझकर नकारा हो जाती है और व्यक्ति एक अभिशप्त जीवन जीने के लिए बाध्य होता है। जबकि गलतियाँ जीवन का सहज स्वाभाविक अंग हैं।

शिशु उठते-गिरते गलतियाँ करते हुए ही तो चलना सीखता है। पहली बार साइकिल सीखने वाला कितनी बार धरती पर गिरता है, चोट खाने से लेकर कपड़े फटने की प्रक्रिया से गुजरता है, लेकिन समय के साथ आवश्यक कौशल भी अर्जित कर लेता है।

न विभेति कदाचनेति।

अर्थात धर्मात्मा कभी किसी से नहीं डरते।

अपने क्षेत्र में सिद्ध एवं सफलतम व्यक्ति प्रारंभ में एक सामान्य से ही तो व्यक्ति थे, तमाम प्रयोग करते हुए, गलतियों को करते हुए वे जीवन की बुलंदियों तक पहुँचे। इतिहास के पन्नों में, रोजमर्रा के जीवन के ऐसे तमाम उदाहरणों को देखा जा सकता है।

अत: जीवन में गलतियों व असफलताओं से निराश न हों, हिम्मत न हारें, इन्हें जीवन का आवश्यक घटक मानते हुए खुले दिल से स्वीकार करें। हर फिसलन, विचलन एवं पटकन के बाद धूल झाड़कर दुगने उत्साह के साथ पुन: तय मंजिल की ओर बढ़ चलें।

छोटे-छोटे कदमों को पुख्ता ढंग से अंजाम देते हुए आपका विश्वास दृढ़ होगा, बढ़ते कदम के साथ हर गलती जीवन का शृंगार प्रतीत होगी और अंतत: मंजिल मिलकर रहेगी। ❑

जीवन में उतरे तभी है ज्ञान का मूल्य

ऋषि याज्ञवल्क्य जैसे ब्रह्मज्ञानी गुरु के आश्रम में 20 वर्षों तक रहकर व्याकरण, शास्त्र, ज्योतिष, धर्मशास्त्र, वेद-वेदांत और दर्शनशास्त्र का गहन अध्ययन करने के बाद धर्मकीर्ति आज अपने घर लौट रहा था। धर्मकीर्ति के अलावा आज तक उसके परिवार में और गाँव में किसी ने भी इतनी ऊँची शिक्षा प्राप्त नहीं की थी। अतः धर्मकीर्ति के पिता ही नहीं, वरन गाँव के सभी लोग आज ऊँची शिक्षा प्राप्तकर लौट रहे धर्मकीर्ति की बड़ी बेसब्री से प्रतीक्षा कर रहे थे।

पूरे गाँव में धर्मकीर्ति के स्वागत तथा सम्मान की तैयारियाँ चल रही थीं। गाँव में जगह-जगह तोरण द्वार बनाए गए थे। घर में तरह-तरह के सुस्वादु व्यंजन बनाए गए थे। सारी तैयारियाँ पूरी हो चुकी थीं। बस, अब धर्मकीर्ति के आगमन व स्वागत को सभी लोग आतुर थे, पर तभी गाँव में यह समाचार फैल गया कि धर्मकीर्ति अब थोड़ी देर में गाँव में प्रवेश करने ही वाला है और कुछ ही देर बाद धर्मकीर्ति का गाँव में आगमन हुआ और जैसे ही धर्मकीर्ति ने गाँव में प्रवेश किया, सारा गाँव मंगलगान और जय-जयकार से गूँज उठा।

धर्मकीर्ति की माता ने अपने पुत्र की आरती उतारी और उसे अपने हृदय से लगा लिया। धर्मकीर्ति के पिता धनपति की खुशी की कोई सीमा न थी। सारे गाँव ने उसका स्वागत-सत्कार किया। दरअसल धर्मकीर्ति के प्रति इतना सम्मान और सत्कार का कारण धर्मकीर्ति का ऊँची शिक्षा प्राप्त करना ही था।

समाज में धर्मशास्त्रों के ज्ञाता को बड़े सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था, उन्हें श्रेष्ठ समझा जाता था; क्योंकि वे समाज के पथप्रदर्शक के रूप में देखे जाते थे। वे स्वयं व दूसरों के जीवन की गुत्थियों, उलझनों व समस्याओं को सुलझाने व सटीक समाधान देने में समर्थ समझे जाते थे। इन सभी कारणों से ऐसे लोगों को समाज में बड़े सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था।

धर्मकीर्ति के गाँव में आए हुए महीनों बीत चुके थे। उसके पिता धनपति चाहते थे कि उनका पुत्र किसी सुयोग्य कन्या से शादी कर गृहस्थ जीवन की जिम्मेदारियों को निभाए और अपने पैतृक कारोबार को भी सँभाले। उधर कई लोग धर्मकीर्ति के लिए विवाह-प्रस्ताव भी लेकर आ रहे थे, पर धर्मकीर्ति कारोबार सँभालने और विवाह-बंधन में बँधने व पारिवारिक और लौकिक उत्तरदायित्वों को मात्र मायाजाल, भ्रम व धोखा मानकर इन सबों से दूर ही रहना चाहता था।

एक दिन धर्मकीर्ति ने अपने पिता धनपति से कह ही दिया—"पिताजी! मैं पारिवारिक और लौकिक जिम्मेदारियों से दूर रहना चाहता हूँ और विवाह नहीं करना चाहता हूँ।" "पर क्यों पुत्र, भला विवाह करने में क्या हर्ज है?"—पिता ने पूछा। "इसलिए कि यह शरीर नाशवान है। संसार और संबंध भी नाशवान हैं। मुझे तो ऐसे संबंध चाहिए जो जीर्ण और नष्ट न हों और व्यवसाय ऐसा चाहिए, जिससे मैं मोक्ष प्राप्त कर सकूँ।"—धर्मकीर्ति ने कहा।

धनपति ने अपने पुत्र को समझाने का बहुत प्रयास किया, पर धर्मकीर्ति मानने को कतई तैयार नहीं हुआ। धर्मकीर्ति शादी, संसार, व्यवसाय आदि

नश्वर, नाशवान संबंधों से कोई भी संबंध रखने को कतई तैयार न था। "पर इसका निदान क्या है ? मैं अपने पुत्र को समझाऊँ तो कैसे समझाऊँ ?"—यह सोचकर धनपति बहुत चिंतित हुए।

अचानक उनके मन में यह विचार आया कि ऋषि याज्ञवल्क्य अवश्य ही इस समस्या का समाधान कर सकते हैं। एक दिन धनपति ऋषि याज्ञवल्क्य के पास पहुँचे और उन्हें अपनी समस्या बताई।

धर्मकीर्ति के मन में शादी, संसार, व्यवसाय आदि को लेकर जो धारणा थी, उसे उन्होंने ऋषिवर को बताया। ऋषिवर समस्या के मूल कारण को समझ गए और उन्होंने धर्मकीर्ति को वापस अपने आश्रम में बुला लिया और वहीं रहने को कहा।

एक दिन ऋषिवर ने धर्मकीर्ति को उपवन में फूल चुनने के लिए भेजा। संयोग से जिस उपवन में धर्मकीर्ति फूल चुन रहा था, उस उपवन का मालिक वहाँ पहुँच गया और धर्मकीर्ति को वहाँ फूल तोड़ते देख आग-बबूला हो गया। उसने धर्मकीर्ति से न कुछ पूछा और न तो उसे कुछ कहा। उसने सीधे अपने हाथ में ली धारदार कुल्हाड़ी तानी और धर्मकीर्ति को मारने दौड़ पड़ा। धर्मकीर्ति वहाँ से जान बचाकर भागा, उपवन का मालिक हाथ में कुल्हाड़ी लिए उसके पीछे दौड़ा।

धर्मकीर्ति और भी तेज दौड़ा, उपवन का मालिक भी और तेज दौड़ा। चूँकि अपनी जान बचानी थी, इसलिए धर्मकीर्ति अब और अधिक तेजी से दौड़ा, उपवन का मालिक भी और अधिक तेजी से दौड़ा। इस प्रकार धर्मकीर्ति आगे-आगे और उपवन का मालिक पीछे-पीछे, दोनों बड़ी तेजी से दौड़े जा रहे थे। अब बचने का कोई उपाय नहीं देख वह आश्रम की ओर भागा और आश्रम में घुस गया। उपवन का मालिक भी उसके पीछे था।

धर्मकीर्ति ऋषि याज्ञवल्क्य के पास पहुँचा और उनके चरणों में गिरकर जल्दी-जल्दी उसने उन्हें सारी घटना कह सुनाई। उपवन का मालिक भी धर्मकीर्ति का पीछा करता हुआ, वहाँ आश्रम तक पहुँच गया था और चुपचाप खड़ा था। ऋषिवर ने सारी बातें सुनी और फिर कहा—"वत्स धर्मकीर्ति! यह देह तो नाशवान है। उपवन का स्वामी तुम्हारी इस नाशवान देह को ही तो नष्ट करना चाह रहा है। अपनी कुल्हाड़ी से वह तुम्हारी नाशवान देह को ही तो नष्ट करेगा। वह तुम्हारी अमर आत्मा को तो मार ही नहीं सकता, फिर तुम इतने भयभीत क्यों हो ?" धर्मकीर्ति कुछ न कह सका। जैसे उसका स्वप्न टूट गया हो और सत्य उसके सामने खड़ा हो। वह अपलक ऋषिवर की ओर देख रहा था।

तब ऋषिवर ने कहा—"वत्स! आत्मा अजर, अमर, अविनाशी है, यह सत्य है, पर देह का धर्म भी तो सत्य है। इसलिए जाओ और दोनों को साधो। जब तक सागर में प्रवेश नहीं करोगे, तब तक तैरना कैसे सीखोगे ? सीखे गए ज्ञान को व्यवहार में उतारकर ही तो उस ज्ञान को सिद्ध किया जाता है। व्यवहार में उतरे और उतारे बिना ज्ञान का कोई मूल्य नहीं होता वत्स! देह में रहकर ही तो उस ज्ञान को व्यवहार में उतारा जाता है। जल में रहकर उससे अस्पृश्य रहने वाले कमल की ही तो प्रशंसा है, अन्यथा जल से तो बहुत से पुष्प अलग रहते हैं। इसलिए जाओ, तुम संसार में जाओ, पर संसार से अलग रहो। तुम संसार में रहो, पर संसार तुममें न रहे। तुम देह में रहो, पर देहासक्ति से मुक्त रहो। तुम देह में रहकर, संसार में रहकर, शादी, व्यवसाय में रहकर उनसे अनासक्त रहने का अभ्यास करो। इसी में तुम्हारा कल्याण है। इसी में मोक्ष है, मुक्ति है।" ❑

संकल्प, धैर्य और श्रद्धा का त्रिविध सुयोग अपनाए रहने पर मनोभूमि ऐसी बनती है कि अध्यात्म के दिव्य अवतरण को धारण कर सके। समय पात्रता विकसित करने में लगता है, गुरु मिलने में नहीं।

भार न बने अधिकार

जब हम अधिकार की बात करते हैं तो उसे दो तरह से समझा जाता है। एक तो वह अधिकार जो हमारे अपने ऊपर है, दूसरा वह जिसे परिस्थितिवश हम दूसरों पर या अपने जीवन के घटकों पर जमाते हैं। अधिकार वह है जिसे हमने देखा नहीं, पर उसकी आज्ञा का पालन हम ऐसे करते हैं मानो कि सारा संसार ही उस पर निर्भर हो। अधिकारी होना उपयुक्त है, पर किसलिए? क्या आत्मा का भी कोई अधिकार होता है।

जिस जीवन को हम जी रहे हैं, उसमें तमाम ऐसी कठिनाइयाँ आती हैं कि आदमी अपना संतुलन खो बैठता है, उसे पता ही नहीं चलता कि कब विषय-वासनाएँ उसके भीतर प्रवेश कर जाती हैं, उसका सारा-का-सारा जीवन अंधकारमय एवं अज्ञान से ग्रस्त होने लगता है। ऐसा तब होता है, जब या तो हमें पता नहीं करना क्या है और यदि पता भी हो तो हम उस दिशा में बढ़ नहीं पाते।

आदमी की इसी कमजोरी का फायदा परिस्थितियाँ उठाती हैं, उसे बेवकूफ और नाकाबिल सिद्ध करती हैं। ऐसे में, यदि हमें कुछ उपयुक्त करना है और अपने जीवन को श्रेष्ठ-समुन्नत बनाना है तो पहले यह करना होगा कि अपना अधिकार आत्मा को देना होगा।

आत्मा क्या कहती है? इसकी पहचान करनी हो तो इतना समझ जाइए कि वह वस्तु-विचार-परिस्थितियों से विलग है, उसका स्वरूप अत्यंत ही विलक्षण एवं स्वभाव से परिष्कृत है तथा उसे मिटाया नहीं जा सकता।

इस दृढ़ मनोभूमि पर जब आदमी के विचार चलते हैं, उसकी उमंगें किसी दिशा को प्राप्त करती हैं तथा उसका साहस मजबूत बनता है तो देखते-ही-देखते वह वह करने को लालायित होता है, जिसे उसे वास्तव में करना चाहिए। वह है आत्मविचार तथा आत्मनियमन की क्रियाविधि।

जब आत्मा अपने संग है तो उसे छोड़कर जाने का प्रश्न ही नहीं उठता और उसे अनुकूल प्रयोजन मिले, इसके लिए पुरुषार्थ-प्रयत्न करने की उत्कंठा एवं उमंग उठ पड़ती है।

इसे ही दैवी-प्रकाश तथा आत्मा को समर्थ-समुत्पन्न बनाने की विधा कहेंगे तथा इसके द्वारा महान सौभाग्य का विषय-क्रम सधने लगता है, जिसे व्यक्तित्व की प्रयोगशाला में परखा एवं तलाशा जाना चाहिए।

हमारे मन के विकार स्वत: ही तिरोहित हो जाते हैं, यदि हममें आत्मा के प्रति ललक एवं उत्कृष्टता के लिए सर्वतोभावेन-समर्पित होने का पुरुषार्थ जग पड़े। इसे ही अपने जीवन पर वास्तविक अधिकार कहेंगे तथा यह प्राप्त होता है अपने मन के नियमन द्वारा तथा उसे जीवन के नव-रूपांतरण में सहायक उत्कृष्ट क्रिया-प्रणाली प्रदान कर। जिसे तभी पाया जा सकता है, जब हम अपने कार्यों को सूचीबद्ध करें, उनमें महानता एवं अनुकंपा के गुण विकसाएँ तथा एक उदात्त जीवन-दृष्टि द्वारा उसे सुविकसित करने का कार्यक्रम अपनाएँ।

इसके लिए चाहिए दृढ़ इच्छाशक्ति और समर्पण-निष्ठा का भाव, जो हमें अपने कर्म के वास्तविक पहलू आत्मविचार और आत्मा के हितार्थ कार्य करने की दृढ़ प्रेरणा से जोड़ सके। इसे ही व्यक्तित्व पर अधिकार एवं जीवन की गुणवत्ता सुधारने का उपक्रम कहेंगे। ❑

स्वामी की तरह करें मोबाइल का उपयोग

आज मोबाइल जीवन की एक अनिवार्य आवश्यकता बन गया है। भारत में सस्ती इंटरनेट सेवा के चलते इसमें जो उछाल आया है, वह अभूतपूर्व है। हर व्यक्ति इंटरनेटयुक्त समार्टफोन लिए हुए है और सभी इसके इतने अभ्यस्त हो चुके हैं कि मोबाइल के बिना कोई जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकता। निस्संदेह रूप में इसके कई वरदान हैं। इसके चलते दैनिक जीवन में कार्य सरल हो गए हैं, दूरदराज के परिवारजनों, संबंधियों, मित्रों एवं आत्मीय परिजनों से बोलकर, लिखकर एवं वीडियो माध्यम से संवाद कुछ ही क्षण में संभव हो पाता है।

भौगोलिक दूरियों के माने जैसे समाप्त से हो गए हैं। जब चाहें हम देश-विदेश के किसी भी कोने में जुड़ सकते हैं। इसके कारण समय की भारी बचत हो रही है, लेकिन इस वरदान के साथ अपने मायावी स्वरूप के कारण मोबाइल अभिशाप भी बनता जा रहा है। बच्चे हों या बूढ़े, किशोर-युवा हों या प्रौढ़ तथा गृहणियाँ—सभी इसकी गिरफ्त में हैं और इसमें इतने मशगूल हो रहे हैं कि किसी को समय का कोई भान नहीं रहता। सभी को घंटों स्मार्टफोन से चिपके देखा जा सकता है, यहाँ तक कि चलते-फिरते हुए भी।

इसमें अनेकों को दुपहिया वाहन चलाते हुए भी, कान में मोबाइल को दबाए, गरदन को एक तरफ झुकाए हुए लोगों से वार्त्तालाप करते देखा जा सकता है। ऐसे में आश्चर्य नहीं कि मोबाइल के कारण आएदिन दुर्घटनाएँ हो रही हैं। मोबाइल से सेल्फी एक बड़ा रोग बना हुआ है, जो इन दुर्घटनाओं में और इजाफा कर रहा है।

सबसे ऊपर मोबाइल की आदत एक लत बनती जा रही है, एक व्यसन के स्तर पर व्याधि का रूप ले चुकी है। फिर मोबाइल का बाजार ही मायावी है। विश्व के श्रेष्ठतम मस्तिष्क जिनमें मनोवैज्ञानिक से लेकर तकनीकि विशेषज्ञ शामिल हैं, इसके लिए काम कर रहे हैं। सबका उद्देश्य एक ही है कि कैसे लोगों का ध्यान आकर्षित किया जाए और वे अधिक-से-अधिक समय मोबाइल से चिपके रहें, जो कि उनके व्यवसाय का आधार है।

जितना वे उपभोक्ताओं का ध्यान खींचे रहेंगे, उतना ही उनका मुनाफा होगा। सोशल मीडिया के नित नए प्रारूप और उनकी मनभावन सुविधाएँ सब इसी पर आधारित हैं और भोली-भाली जनता सहज ही उनके बिछाए जाल में फँस रही है। उपभोक्ताओं को एहसास ही नहीं है कि उनके एटेंशन स्पैन को गिरफ्त में लेकर इन बड़ी कंपनियों का धंधा फल-फूल रहा है और वे उनके व्यवसाय के महज एक माध्यम बने हुए हैं। साथ ही मुफ्त सेवा के नाम पर उपभोक्ताओं से जुड़ा डाटा एकत्र किया जा रहा है, जिसका अपना व्यापार है।

इसी को देखकर उपभोक्ता की पसंद-नापसंद के अनुरूप विज्ञापन से लेकर समाचार व अन्य सामग्रियाँ परोसी जा रही हैं और आम इनसान इनके मायाजाल में उलझता जा रहा है। आश्चर्य नहीं कि निर्माता और मालिक स्वयं इसका उपयोग नहीं करते और अपने बच्चों को भी इनसे यथासंभव दूर रखते हैं। आज स्मार्टफोन की प्रत्यक्ष हानियाँ हाथोंहाथ दिख रही हैं।

आँखों का सूखना या पानी आना, एकाग्रता का अभाव, स्मरणशक्ति का लोप, समय पर नींद नहीं आने की समस्या, चिड़चिड़ाहट, सिरदरद जैसे लक्षण स्मार्टफोन के अत्यधिक प्रयोग के साथ तत्काल उपयोगकर्त्ता अनुभव कर रहे हैं। इसके साथ निश्चित रूप से कार्यक्षमता प्रभावित होती है।

लत लगने के कारण इसके बिना नहीं रह पाने की बेचैनी, अज्ञात-सा भय और घबराहट जैसी समस्याएँ जुड़ने लग जाती हैं। इसके साथ उदासीनता, तनाव, अवसाद जैसी मानसिक विकृतियाँ पैदा होती हैं। कई लोगों को फोन के बंद होने पर भी, उसके बजने का भ्रम होता है, जो कि एक तरह का फोबिया होता है, जिसे नोमोफोबिया कहा जाता है। ऐसे में समाधान की राह क्या हो?

मोबाइल को बंद नहीं कर सकते, लेकिन मध्यम मार्ग का अनुसरण करते हुए इससे जुड़े अभिशाप से बच सकते हैं या उन्हें कम कर सकते हैं। वास्तव में आज के युग में मोबाइल का संयमित उपयोग किसी साधना से कम नहीं है। इससे जुड़े कुछ उपयोगी सूत्र इस तरह से हो सकते हैं—

सबसे पहले मोबाइल को पहुँच से दूर रखें; क्योंकि इसका प्रलोभन यदि आसान पहुँच के अंदर रहता है तो पुराने ढर्रे पर वापस लौटना बहुत आसान हो सकता है। साथ ही अपने फोन के उपयोग पर दृष्टि रखें कि कितना समय उसका उपयोग हो रहा है व कितना समय इसमें बरबाद हो रहा है। जिसमें मोबाइल पर उपलब्ध एप्स का सहारा भी लिया जा सकता है।

प्रलोभनों को पहचानें, जो फोन तक पहुँचने के लिए बाध्य करते हैं। जब अकेले, ऊब जाते हैं, तनाव, अवसाद या चिंता में होते हैं, तो इससे उबरने के लिए, खराब मनोदशा को शांत करने का तरीका मोबाइल हो सकता है। ऐसे में मोबाइल के बिना विश्राम के दूसरे तरीकों से मनोदशा को प्रतिबंधित करने के अधिक स्वस्थ एवं प्रभावी तरीके खोजे जा सकते हैं।

इसमें ध्यान, शिथिलीकरण, रोचक पुस्तकों का अध्ययन, दोस्तों से बातचीत आदि को आजमाया जा सकता है।

फोन से सोशल मीडिया ऐप्स हटा दें, ताकि आप केवल कंप्यूटर से फेसबुक, ट्विटर व गैर उत्पादक सोशल मीडिया के उपयोग को संयमित व सीमित कर सकें और याद रखें कि सोशल मीडिया पर दूसरों के बारे में जो देखते हैं, वह उनके जीवन का यथार्थ नहीं होता। इनमें जीवन के सकारात्मक पहलू बढ़ा-चढ़ाकर प्रस्तुत हो रहे होते हैं। उनके आधार पर स्वयं को कमतर आँकने की भूल न करें और संदेह व निराशा को हावी न होने दें।

इस तरह आवश्यक कार्यों के लिए ही मोबाइल का उपयोग करें। किसी से आवश्यक वार्त्तालाप से लेकर महत्त्वपूर्ण जानकारी को खोजने व अध्ययन करने में इसका उपयोग सर्वथा वांछनीय है, लेकिन इसके लिए भी समय निर्धारित रखें। कभी भी, कहीं भी, चलते-फिरते, किसी से वार्त्तालाप करते हुए मोबाइल में रह-रहकर झाँकने की आदत शोभनीय नहीं।

दिन के कुछ सुनिश्चित समय में फोन को बंद कर दें, जैसे वाहन चलाते समय में, चलते समय में, किसी गोष्ठी में, भोजन करते समय या अपने परिवारजनों के बीच। सोने से 2 घंटे के अंदर यदि स्क्रीन का उपयोग किया जाए, तो इससे निकलने वाली रोशनी आपकी नींद में व्यवधान डाल सकती है। अत: मोबाइल को बंद रखें या दूसरे कमरे में छोड़ें।

रात को फोन या टैबलेट पर ई–पुस्तकें पढ़ने के बजाय, कोई पुस्तक उठाएँ। इससे न केवल बेहतर नींद आएगी, बल्कि जो पढ़ा है वह अधिक याद रहेगा।

इस तरह मोबाइल के संयमित उपयोग के साथ आत्मविश्वास बढ़ेगा, कार्य–क्षमता में वृद्धि होगी, आत्मसम्मान का भाव पुष्ट होगा तथा सही माने में हम स्मार्ट फोन के स्वामी की तरह इसका उपयोग कर रहे होंगे, न कि इसके सेवक बनकर इसकी गुलामी कर रहे होंगे। निस्संदेह रूप में आवश्यकता आज स्मार्ट फोन का स्वामी बनने की तथा इसके श्रेष्ठतम उपयोग करने की है। ❑

एक राजा को राज्य के राजस्व विभाग की देख–रेख के लिए उपयुक्त व्यक्ति की तलाश थी। उन्होंने अपने महामंत्री से एक ऐसे योग्य व्यक्ति को ढूँढ़कर लाने को कहा।

कुछ दिनों बाद महामंत्री एक व्यक्ति को लेकर के आए। राजा ने उसे पद तो प्रदान कर दिया, पर मंत्री से बोले—''ये आदमी योग्य तो है, पर दिखने में आकर्षक नहीं है। इसका रूप–रंग राजसी कार्यों के लिए उचित नहीं।'' मंत्री यह सुनकर भी चुप रहे।

कुछ दिनों बाद, एक दिन गरमी के मौसम में राजा को प्यास लगी। मंत्री ने राजा के सेवक से कहा—''महाराज को सोने के गिलास में पानी दो।'' पानी गरम था, राजा से घूँट भर भी न पिया गया।

तब मंत्री ने सेवक से कहा—''अब महाराज के लिए सुराही का पानी लाओ।'' सुराही का ठंढा पानी पीते ही महाराज की प्यास बुझ गई। मंत्री का इशारा महाराज की समझ में आ चुका था कि मनुष्य की योग्यता एवं पात्रता की पहचान उसके रूप–रंग से नहीं, वरन उसके आंतरिक गुणों से होती है।

ब्रह्मवर्चस-देव संस्कृति शोध सार—187

सांस्कृतिक शोध अध्ययन

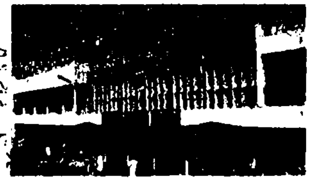

भारतभूमि पर ऐसे अनेक नगर और शहर हैं जिनका प्राचीन इतिहास हमारी सामाजिक, सांस्कृतिक और राष्ट्रीय समृद्धता, श्रेष्ठता और जीवनमूल्यों को अपनी विरासत में सँजोये हुए है। ऐसे शहरों से हमारे गौरवशाली इतिहास और संस्कृति को वर्तमान परिप्रेक्ष्य में खोजना दुष्कर कार्य है, परंतु शोध-अनुसंधान की प्रक्रिया द्वारा इनके तत्कालीन स्वरूप को अवश्य ही जाना-समझा जा सकता है।

प्राचीन नगरों से जुड़े ऐतिहासिक साक्ष्यों, तथ्यों का विश्लेषण कर उस काल की संस्कृति, साहित्य, दर्शन, धार्मिक-सामाजिक एवं आर्थिक संरचना आदि का सटीक पता लगाया जा सकता है। आवश्यकता है कि इस दिशा में व्यापक स्तर पर शोध-अन्वेषण के कार्यों को संपन्न किया जाए, ताकि हमारे प्राचीन गौरवपूर्ण इतिहास के महत्त्वपूर्ण एवं प्रेरक पहलुओं को आधुनिक विश्व के समक्ष प्रामाणिकता से उजागर किया जा सके।

उक्त संदर्भ में देव संस्कृति विश्वविद्यालय के भारतीय इतिहास एवं संस्कृति विभाग के अंतर्गत वर्ष 2019 में एक महत्त्वपूर्ण एवं विशिष्ट शोध अध्ययन का कार्य संपन्न किया गया है। यह शोध कार्य शोधार्थी शालिनी द्वारा विश्वविद्यालय के कुलाधिपति श्रद्धेय डॉ० प्रणव पण्ड्या जी के विशेष संरक्षण एवं डॉ० रवींद्र सिंह के निर्देशन में पूर्ण किया गया है।

इस अध्ययन का विषय है—'**हाथरस जनपद का ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन (आधुनिक परिप्रेक्ष्य में)**।' शोध को कुल 7 अध्यायों में वर्गीकृत कर प्रस्तुत किया गया है।

अध्ययन का प्रथम अध्याय '**विषय प्रवेश**' है। इसके अंतर्गत शोध की आवश्यकता, महत्त्व एवं उद्देश्य को प्रस्तुत करते हुए शोध विषय का परिचय, अध्ययन की सीमाएँ और विशेषताएँ प्रस्तुत की गई हैं। शोधार्थी का यह स्पष्ट मत है कि ऐसे अध्ययन से क्षेत्रीय संस्कृति और इतिहास को प्रकाश में लाने हेतु सहायता मिलती है।

इस अध्ययन में जिस हाथरस जनपद का चयन किया गया है, वह भारत के इतिहास और संस्कृति की समृद्ध विरासत को समझने की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है। ब्रज-क्षेत्र में स्थित हाथरस जनपद प्राचीनकाल से लेकर इस आधुनिककाल तक की यात्रा में हमारी संस्कृति, समाज और इतिहास के उत्थान-पतन के अनेकों साक्ष्यों को अपनी विरासत में समेटे हुए है।

भौगोलिक स्थिति में गंगा-यमुना जैसी पवित्र नदियों के मध्य सेंगर नदी के तट पर स्थित हाथरस जनपद उत्तर प्रदेश का एक महत्त्वपूर्ण भाग है। यह मथुरा, ताला नगरी अलीगढ़ और ताज नगरी आगरा से जुड़ा हुआ ऐतिहासिक विरासत से संपन्न क्षेत्र है। महाभारत के अनुसार यह प्राचीनकाल में ब्रज का ही अंग था और '**ब्रज की देहरी**' उपनाम से भी जाना जाता था।

ऐतिहासिक साक्ष्य के अनुसार किसी समय यहाँ एक उन्नत सभ्यता का विकास हुआ था, जिसे जाट राजवंशों के राज्य के रूप में पहचाना जाता है। वर्तमान में यहाँ ब्रज संस्कृति का प्रभाव है और

'नारी सशक्तीकरण' वर्ष

'**वसुधैव कुटुम्बकम्**' की भावना सँजोये सभी धर्म-संप्रदायों के लोग यहाँ भाईचारे, शांति और सौहार्द की मिसाल पेश करते हैं।

प्राचीनकाल से ही यह हिंदू, बौद्ध और जैन धर्म के साधकों की कर्मभूमि रही है, जिसके अवशेष अभी भी यहाँ प्राप्त होते हैं। द्वितीय अध्याय '**भौगोलिक स्थिति एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि**' है। इसके अंतर्गत हाथरस जनपद की भौगोलिक संरचना जैसे समुद्र तल से ऊँचाई, अक्षांश, प्राकृतिक संपदाएँ—नदी, झील, सरोवर आदि का विवेचन करते हुए ऐतिहासिक कालक्रमों की घटनाओं, परिवर्तनों को विस्तार से प्रस्तुत किया गया है।

हिमालय से निकली गंगा-यमुना जैसी दिव्य नदियों का मैदानी क्षेत्र में मध्य भाग जिसे अंतर्वेदी भी कहा जाता है, वहीं हाथरस जनपद स्थित है। यह जनपद उत्तर में 27.6 डिगरी तथा पूर्व में 78.5 डिगरी अक्षांश पर मौजूद है। पूर्व दिशा से पश्चिम की ओर इसकी अधिकतम लंबाई 404 मील है तथा विभिन्न साधन-संसाधन द्वारा समृद्ध भू-भाग समतल तथा शुद्ध सिंचित क्षेत्र हैं।

इसके आस-पास कासगंज, मथुरा, आगरा, अलीगढ़, एटा जैसे सांस्कृतिक महत्त्व के जनपदों की सीमाएँ जुड़ी हैं। गंगा-यमुना का मध्य क्षेत्र होने से यहाँ नदी, नहरों, झील, सरोवरों की प्रचुरता है। 17 लाख से अधिक आबादी वाला यह जनपद देश के सभी क्षेत्रों से यातायात के लिए सुलभ है। इसमें 4 तहसील, 7 विकासखंड, 2 नगरपालिका और 7 नगर पंचायतें हैं।

ऐतिहासिक दृष्टि से यह उत्तर प्रदेश का एक प्राचीन नगर है, जिसका इतिहास अत्यंत गौरवशाली रहा है। इसकी गिनती ब्रज-क्षेत्र में होती है। मान्यता है कि द्वापर युग के अंत से ही इसे नगर का रूप प्राप्त हुआ, इसके पूर्व भगवान कृष्ण के समय यह वन प्रदेश था। पार्वती जी के स्थान के रूप में हाथरसी देवी का मंदिर और इससे जुड़े कथानक इसके पौराणिक महत्त्व को उजागर करते हैं।

कुषाण, मौर्य, गुप्त एवं राजपूत राजवंशों ने अलग-अलग समय पर इस नगर को अपनी सत्ता का केंद्र बनाया और अनेकों भवन, किलों आदि का निर्माण कराया, जिनके अवशेष उत्खनन में आज भी प्राप्त होते हैं। शैव, वैष्णव, जैन प्रतिमाओं के खंड-प्रखंड इस नगर के धार्मिक एवं उपासना संबंधी स्वरूप को प्रकट करते हैं। मुसलिम काल से अँगरेजी शासन तक यहाँ जाटों व राजपूतों का राज रहा है, जिन्होंने अपनी-अपनी विशेषताओं से इस क्षेत्र को सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक समृद्धता प्रदान की है। इनका विस्तृत वर्णन शोधार्थी ने इस अध्याय में किया है।

शोध अध्ययन का तृतीय अध्याय है—'**साहित्य एवं दर्शन**।' इसमें हाथरस जनपद की भाषा, प्रमुख साहित्यकार और उनकी रचनाओं तथा यहाँ के दर्शन की विवेचना की गई है। हाथरस की मातृभाषा ब्रजभाषा तथा लिपि देवनागरी है।

यहाँ के प्रमुख साहित्यकारों में चार वर्ग हैं—(1) जिनका जन्म यहाँ हुआ और उनकी रचनाएँ भी यहीं के लिए प्रेरित रहीं। (2) जिनका जन्म तो यहाँ हुआ, परंतु रचनाओं के संदर्भ बाहरी रहे। (3) जिनका जन्म हाथरस से बाहर हुआ, परंतु उनकी कृतियों का केंद्र हाथरस रहा और (4) जिन्होंने इसे अपने अध्ययन का केंद्र एवं विषय बनाया।

इन चारों वर्गों में प्रमुख नाम हैं—संत तुलसी साहब (घट रामायण, शब्दावली और रत्न सागर), मुरलीधर राय (अद्वितीय शायर और स्वांग गायक), उत्साद इंदरमन (कृति-संगीत प्रेम), पं० नथाराम शर्मा गौड़ (भारतीय लोक संगीत और अभिनय

कला की 200 से अधिक रचनाएँ), संत प्रभुदत्त ब्रह्मचारी (श्रीकृष्ण का चरित्र, 'भागवती गाथा', महात्मा कर्ण, मतमारी मीरा, राघवेंदु चरित, चैतन्य चरितावली आदि), पं० रूपराम शर्मा वियोगी, डॉ० धनीराम, काका हाथरसी जैसे साहित्यकारों की सुदीर्घ शृंखला यहाँ मौजूद है, जिनकी रचनाओं ने साहित्य की सभी विद्याओं को समृद्ध बनाया और इस क्षेत्र को भी साहित्यिक दृष्टि से महत्ता प्रदान की है।

चतुर्थ अध्याय '**सांस्कृतिक विरासत**' है। इसके अंतर्गत विभिन्न प्रकार की भारतीय कलाओं जैसे—स्थापत्य, मूर्तिकला, वास्तु-शिल्प, संगीत, नृत्य, नाट्य आदि की विस्तृत विवेचना प्रस्तुत की गई है।

सांस्कृतिक विरासत का तात्पर्य है, जो संस्कृति हमें अपने पूर्वजों से प्राप्त होती है, जिसकी स्पष्ट झलक वहाँ के निवासियों की जीवनशैली में दिखाई देती है। हाथरस जनपद में भी हमारी संस्कृति की अमूल्य सांस्कृतिक विरासत उपलब्ध होती है।

स्थापत्य एवं मूर्तिकला, चित्रकला, काव्यकला, संगीतकला आदि से संबंधित ठोस साक्ष्य हाथरस की प्राचीन संस्कृति की समृद्धता और गौरव को प्रकट करते हैं। वहाँ प्राप्त मूर्तियों, मंदिरों और महलों में हमारी संस्कृति के विविध रूप प्राप्त हुए हैं, जिनका विस्तृत एवं क्रमिक विवरण इस अध्याय में मौजूद है। साथ ही हाथरस का संगीत, नाट्य, विशेष रूप से स्वांग संगीत आदि कलाओं का भी विवेचन किया गया है।

अध्ययन का पंचम अध्याय है—'**सामाजिक एवं धार्मिक संरचना**।' इसके अंतर्गत हाथरस जनपद में निवास करने वाले समाज की सामाजिक एवं धार्मिक संरचना एवं विशेषताओं का विस्तृत विवेचन किया गया है। हाथरस में हिंदू, मुसलिम, ईसाई, जैन और बौद्ध आदि प्रमुख धर्मों के मतावलंबी निवास करते हैं। हिंदू समाज यहाँ अधिकता में विद्यमान है।

पारंपरिक परिधान के रूप में पुरुषों में पाग, फैंटा (साफा), टोपी आदि और महिलाओं में साड़ी, अँगिया, लहँगा, ओढ़नी, चुनरी, पोचमा, चादर आदि का न्यूनाधिक प्रचलन है। भोजन में भारतीय व्यंजनों जैसे मावे व शुद्ध घी की मिठाइयाँ, सोहन हलवा आदि प्रसिद्ध हैं।

नाटक, युद्धकला, मल्लविद्या, अखाड़ों का यहाँ की लोक संस्कृति से पुरातन संबंध रहा है। पूजा-उपासना, रीति-रिवाज, पर्व-त्योहार में विशुद्ध भारतीय संस्कृति की सुदीर्घ परंपराओं और संस्कारों का समावेश है। हाथरस का लक्खी अथवा श्री दाऊ जी का मेला प्रसिद्ध है, जो प्रतिवर्ष भाद्र मास के शुक्ल पक्ष में मनाया जाता है।

धार्मिक दृष्टि से इस धरती पर ब्रज का योग, शक्ति-उपासना वाले शाक्त धर्म, शैव और वैष्णव धर्म के उपासनास्थल, जैन धर्म के प्राचीन मंदिर, उपलब्ध होते हैं। पूरा क्षेत्र अलग-अलग रूपों से धार्मिक भावनाओं से जुड़े पर्वों, आयोजनों, उपासना आदि से वर्षपर्यंत सराबोर रहता है।

षष्ठ अध्याय है—'**आर्थिक स्वरूप का विवेचन**।' इसके अंतर्गत हाथरस जनपद के उद्योग धंधे, कृषिकार्य, गुलाब उद्योग, इत्र निर्माण, गुलकंद निर्माण, गुंजा-मोती उद्योग, काँच के सामानों का निर्माण, हींग उद्योग, मूर्ति निर्माण आदि प्रमुख आर्थिक उत्पादन के क्षेत्रों का विस्तृत विवेचन किया गया है।

यहाँ के बहुआयामी उद्योगों और निर्माण इकाइयों व कारीगरों के कारण यह क्षेत्र औद्योगिक दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण रहा है। यहाँ के गुलाब का इत्र तो पूरी दुनिया में प्रसिद्ध है। कलानगरी के रूप में भी, इस नगरी की विशेष पहचान है। यहाँ की

भूमि भी सिंचित और उपजाऊ होने से कृषक, वर्ष में तीन फसलों का उत्पादन कर पाते हैं। दाल उद्योग यहाँ अधिकता में किया जाता है। यहाँ के काँच से बने सामान पूरे देश में जाते हैं। ऐसे ही छोटे-बड़े अनेक उद्योगों से युक्त यह आर्थिक रूप से एक समृद्ध जनपद है।

अध्ययन का अंतिम सोपान '**उपसंहार**' है। इसमें सभी अध्यायों का सार-संक्षेप प्रस्तुत करते हुए शोध का निष्कर्ष, महत्त्व व उपादेयी पहलुओं को प्रस्तुत किया गया है। शोध के निष्कर्ष में यह स्पष्ट है कि हाथरस जनपद ब्रज का ऐसा क्षेत्र है, जो प्राचीन एवं पौराणिककालीन अनुश्रुतियों से जुड़ा होने के साथ ही भारतीय संस्कृति एवं कलाओं की विरासत को भी प्रचुरता में सँजोये हुए है। साहित्य और संगीत यहाँ समानांतर रूप में प्राचीनकाल से अद्यतन अपनी विशेष पहचान बनाए हुए भारत की लोक संस्कृति को जीवंत बनाए हुए हैं। ऐतिहासिक और सांस्कृतिक विरासत को स्वयं में आत्मसात् करते हुए यह जनपद निरंतर विकास के मार्ग पर अग्रसर बना हुआ है। ❑

दुर्योधन जानता था कि उसकी माता गांधारी पुण्यात्मा एवं धर्मपरायण महिला हैं एवं उनके मुख से निकले वचन मिथ्या नहीं जाते। महाभारत युद्ध के समय वह प्रतिदिन माता गांधारी के पास जाता एवं उनसे विजय का आशीर्वाद माँगता। पर गांधारी उसे प्रतिदिन एक ही उत्तर देतीं—'यतो धर्मस्ततो जयः।' जहाँ धर्म है, वहीं विजय है। युद्ध की समाप्ति तक गांधारी के समस्त पुत्रों का अंत हो गया। जब युधिष्ठिर अपने भाइयों समेत गांधारी से मिलने पहुँचे तो मातृवत् प्रेम के कारण गांधारी को क्रोध आ गया, पर इससे पहले कि वो पांडवों को शाप देतीं, महर्षि व्यास उनसे बोले—"बेटी गांधारी! तुमने जीवन भर धर्म का साथ दिया है। तुम ही स्वयं दुर्योधन को कहा करती थीं कि जहाँ धर्म है, वहाँ जय है। अब पांडवों को शाप देकर क्यों अधर्म को विजयी बनाना चाहती हो।" महर्षि व्यास के कथन सुनकर गांधारी का क्रोध शांत हो गया।

राजसिक त्याग से भी नहीं मिलता है त्याग का फल

(श्रीमद्भगवद्गीता के मोक्ष संन्यास योग नामक अठारहवें अध्याय की आठवीं किस्त)

[इससे पूर्व की किस्त में श्रीमद्भगवद्गीता के अठारहवें अध्याय के सातवें श्लोक की व्याख्या प्रस्तुत की गई थी। इस श्लोक में भगवान कृष्ण, अर्जुन से कहते हैं कि नियत कर्मों का त्याग करना उचित नहीं है। उनका मोहपूर्वक त्याग तामसिक कहा गया है। जितने भी शास्त्रोक्त विहित कर्म हैं, वे नियत कर्म कहलाते हैं; क्योंकि वे हमारे कर्त्तव्य कर्म होते हैं। उनको त्याग देने पर उसका दुष्परिणाम अनेकों को भुगतना पड़ता है। इस श्लोक से लेकर आने वाले 2 और श्लोकों को मिलाकर श्रीभगवान तीन तरह के त्यागों का वर्णन करते हैं और उसका प्रारंभ तामसिक त्याग के विवरण से करते हैं। वे कहते हैं कि तामसिक त्याग हर दृष्टि से त्याज्य ही है और वैसा करना संसार से मुक्ति नहीं दिलाता, वरन बंधन का ही कारण बनता है। इसीलिए भगवान इस श्लोक में कहते हैं कि नियत कर्मों को मूढ़ता से अर्थात बिना विवेक-विचार के त्याग देना तामसिक होता है। एक तरह से भगवान इस श्लोक में बाह्य एवं आंतरिक त्याग का अंतर भी स्पष्ट कर देते हैं।

कई लोग कर्मों के त्याग को ही त्याग मानकर बैठ जाते हैं; क्योंकि यह प्रत्यक्ष त्याग दिखाई पड़ता है। इसके विपरीत भगवान आंतरिक त्याग को, वासना-आसक्ति के त्याग को ही सच्चा त्याग मानते हैं; क्योंकि यही हमारे जन्म-मृत्यु-कर्मबंधन का कारण है। यदि बाह्य त्याग को वास्तविक त्याग माना जाए तो मृत्यु के साथ ही सबकी मुक्ति हो जाती है; क्योंकि तब तो शरीर से ही संबंध छूट जाता है। ऐसा परंतु होता नहीं है। आंतरिक बंधन, कर्म के बंधन जब खुलते हैं; तभी मुक्ति हो पाती है। वही सच्चा त्याग है। इसीलिए भगवान आंतरिक त्याग को सच्चा त्याग बताते हुए बाह्य त्याग को तामसिक ठहराते हैं।]

इसके उपरांत वे कहते हैं कि

दुःखमित्येव यत्कर्म, कायक्लेशभयात्त्यजेत्।
स कृत्वा राजसं त्यागं, नैव त्यागफलं लभेत्॥ 8॥

शब्द विग्रह—दुःखम्, इति, एव, यत्, कर्म, कायक्लेशभयात्, त्यजेत्, सः, कृत्वा, राजसम्, त्यागम्, न, एव, त्यागफलम्, लभेत।

शब्दार्थ—जो कुछ (**यत्**), कर्म है (**कर्म**), वह सब (**तत्**), दुःखरूप ही है (**दुःखम् एव**), ऐसा (समझकर यदि कोई) (**इति**), शारीरिक क्लेश के भय से (कर्त्तव्य कर्मों का) (**कायक्लेशभयात्**), त्याग कर दे (तो) (**त्यजेत्**), वह (ऐसा) (**सः**), राजस

▶ 'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

(**राजसम्**), त्याग (**त्यागम्**), करके (**कृत्वा**), त्याग के फल को (**त्यागफलम्**), किसी प्रकार भी (**एव**) नहीं पाता (**न लभेत्**)।

अर्थात जो कुछ कर्म है, वह दुःख रूप ही है—ऐसा समझकर कोई शारीरिक क्लेश के भय से उसका त्याग कर दे तो वह राजस त्याग करके भी त्याग के फल को नहीं प्राप्त कर पाता। यहाँ एक गूढ़ चिंतन भगवान देते हैं। वे कहते हैं कि राजसिक त्याग का फल सुख नहीं हो सकता; क्योंकि ये रागरूप में जन्मा है। जो राग के कारण जन्मा त्याग हो वो शांति के स्थान पर अशांति का ही कारण बनता है। ऐसा इसलिए; क्योंकि मन में भावना, कामना की ही थी।

इस श्लोक में भगवान कहते हैं कि जो कर्म शारीरिक क्लेश या शरीर के कष्ट के भय से दुःखदायक समझकर त्यागा जाता है, वह राजसिक त्याग कहलाता है और उस त्याग का फल प्राप्त नहीं होता। इससे पहले भगवान ने यह स्पष्ट भी किया था कि यज्ञ, दान, तप व नियत कर्मों का त्याग कभी नहीं करना चाहिए और यदि कोई वैसा करता है तो वह तामसिक त्याग कहलाता है। मोहपूर्वक यदि इनको त्यागें तो वह तामसिक त्याग है; क्योंकि वह मूढ़ता से जन्मा भाव है। और शारीरिक क्लेश की चिंता में इनको त्यागा तो वह राजसिक त्याग है; क्योंकि वह भय से जन्मा भाव है।

त्याग का वास्तविक फल तो सात्त्विक त्याग में ही मिल पाता है, जिसके विषय में श्रीभगवान इससे अगले सूत्र में बताएँगे। बिना आसक्ति का त्याग करे जो भी त्यागा जाए, वह त्याग का फल नहीं ला सकेगा—ऐसा श्रीभगवान कह रहे हैं। इसीलिए वे कहते हैं कि '**राजसं त्यागं कृत्वा त्याग फलं सः एव न लभेत्**'—अर्थात राजसिक भाव से किए गए इस त्याग का फल नहीं मिल पाता है। सारांश में कहें तो ईश्वर प्रेरित या नियत कर्त्तव्य कर्मों का त्याग तामसिक होता है तो वहीं देहासक्ति के कारण किए गए कर्मों का त्याग राजसिक होता है।

यहाँ भगवान ने क्लेश शब्द का प्रयोग किया है। क्लेश को परिभाषित करते हुए महर्षि पतंजलि, योगसूत्र में कहते हैं कि '**ते च बाधनालक्षणं परितापम् उपजनयन्तः क्लेश शब्द वाच्या भवन्ति॥**' क्लेश, वे जो प्राणी को त्रिविध ताप देते हैं और चित्त में संस्कार रूप से रहते हैं। इनका कार्य प्रकृति के गुणों के कार्य को और दृढ़ करना है अर्थात ये त्रिगुणात्मिका बुद्धि को पुरुष के भोग-अपवर्गरूपी कार्य में दृढ़ता से लगाए रखते हैं, इसलिए गुणों की परिणामधारा अबाधित रूप से चलती रहती है।

बरसात आई तो तालाब का पाट चौड़ा हो गया। गर्व से उन्मुक्त होकर वह कुएँ से बोला—"मेरा विस्तार तो देखो, तुम्हारे जैसे बीसियों कुएँ मुझमें समाकर अपना अस्तित्व खो सकते हैं।" कुआँ बोला—"मित्र केवल विस्तार ही पर्याप्त नहीं होता, व्यक्तित्व में गहराई भी तो होनी चाहिए।" तालाब से कुछ कहते न बना।

श्रीभगवान कहते हैं कि इनसे भयभीत हो कर सभी कर्मों को त्याग देने वाला भी राजसिक त्याग कर रहा है; क्योंकि वैसा करने पर भी मात्र कर्म को करना छूटा है, उसके साथ का संग नहीं छूटा है। वह तो मात्र निरासक्त होने पर और ईश्वर-प्रणिधान से ही संभव हो पाता है। ये राजसिक त्याग इसीलिए त्याग के फल को प्राप्त नहीं कर पाता है। (क्रमशः)

परमवंदनीया माताजी की अमृतवाणी

श्रद्धा के बीजारोपण की साधना

(उत्तरार्द्ध)

परमवंदनीया माताजी के उद्‍बोधनों की यह मौलिकता है कि वे गहन आध्यात्मिक विषयों का समाधान करने में भी सक्षम हैं और एक जीवन की सामान्य उलझनों में उलझे व्यक्ति को ऊपर उठा पाने में भी सक्षम हैं। एक ऐसा ही जीवन का दिशा-निर्देश सुनिश्चित करने वाले अपने इस उद्‍बोधन में वंदनीया माताजी प्रत्येक साधक को यह स्मरण दिलाती हैं कि नवरात्रि साधना का मूल आधार श्रद्धा के बीजारोपण में है। वे मीरा, पिसनहारी जैसे श्रद्धानिष्ठ एवं समर्पण के धनी व्यक्तित्वों का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए बताती हैं कि हर वो व्यक्तित्व जिसने आत्मा की पुकार को सुना और अपनी श्रद्धा को इष्ट के सम्मुख समर्पित किया—उसके जीवन में चमत्कार घटित हो करके रहे। किसी भी साधना का मूल यदि किसी एक तत्त्व को कह करके पुकारा जा सकता है तो उसका नाम है—श्रद्धा, समर्पण, विश्वास। आइए हृदयंगम करते हैं उनकी अमृतवाणी को........

भगवान का व्रत

भगवान राम ने अश्वमेध यज्ञ किया था, तो उस समय वसिष्ठ जी ने कहा—"राम! बगैर पत्नी के यज्ञ सफल नहीं होता है। तुम दूसरी शादी कर लो।" राम ने पता है क्या कहा? उन्होंने कहा—"मैंने एक पत्नीव्रत धारण किया है और मेरी तो सीता ही सब कुछ हैं।" उन्होंने कहा—"सीता यहाँ कहाँ हैं?" तो उन्होंने एक सोने की मूर्ति बनवा करके यज्ञस्थल पर रख दी।

उन्होंने कहा कि ये मेरी पत्नी हैं। जो नियम हैं, वे सबके लिए एक से हैं। नहीं साहब! पत्नी मरेगी तो कोई शोक नहीं मनाया जाएगा, कुछ नहीं होगा और पति न हो तो पत्नी को सती करा दिया जाएगा। सती प्रथा है, सती करा दिया जाएगा। क्यों साहब! उसको क्यों कराया जाएगा? उसने आखिर क्या बिगाड़ा है?

आखिर बताइए, यह बुद्धिसंगत बात नहीं है। बुद्धिसंगत तो यह है कि जैसे कोई गलत कदम उठा रहे हैं, तो उस गलत कदम पर भी हमको सहयोग नहीं करना चाहिए। क्यों करेंगे? क्यों उस बेचारी ने क्या बिगाड़ा है? आपको मालूम नहीं है राजस्थान की एक घटना का? बहुत हंगामा मचा था, जब जबरदस्ती एक लड़की को उसके पति के साथ धकेल करके सती कर दिया गया।

उन दिनों जब शिविर चले तो मैं बहुत ही गुस्से में, बहुत ही आवेश में थी। जो सत्र होते थे, उनमें अक्सर मैं इसी बात को कहती थी। मैंने कहा—"आज के बाद हम एक अध्यादेश लागू करने वाले हैं कि जिसकी पत्नी मर गई है, तो उस पत्नी के साथ उसके पति के हाथ-पाँव बाँधकर

उसकी चिता में धकेल देना चाहिए।'' क्यों? इसलिए कि दाल-आटे का भाव मालूम तो पड़ेगा कि पीड़ा कैसी होती है? दरद कैसा होता है? वह भी अपनी माँ की बेटी है, उसकी माँ को दरद नहीं होगा, तेरी माँ को होगा, तेरे बाप को होगा। तो इनको जरूर धकेलो। कम-से-कम 10, 20, 50 ऐसे धकेले जाएँगे, तो फिर जितनी भी ये सती प्रथा है सब एकदम बंद हो जाएगी।

आस्था जगाएँ

मैंने कहा कि मैं तो भावनाओं की दृष्टि से यह कह रही थी। भावनाओं और आस्थाओं की दृष्टि से परिपक्व नारी हो या नर हो, दोनों के लिए मैंने आज सुबह के प्रवचन में यह कहा था। मैंने कहा कि दोनों एक हो जाओ। जैसे साल भर का शिशु अपनी माँ की गोद में ही खेलता है। माँ जो देती है, वही खाता-पीता है। वह अपनी माँ का दूध पीता है। आप एक छोटे से शिशु की भाँति बन जाइए। एक साल भर के शिशु बन जाइए और गायत्री माता की गोद में आप इस तरीके से अपना चिंतन रखिए कि हम छोटे से बच्चे हैं और हमारी माँ हमको दूध पिला रही है।

माँ की जो आँखें हैं और आँख में जो काला बिंदु है, वह एक ज्योति के समान चमक रहा है। यह ज्योति हमारे अंग-अंग को प्रकाशित कर रही है। सूर्य के अंदर सूर्य का जो गोला है, उस गोले में गायत्री माता की जो छवि है, उस छवि को निहारो और उसमें यह भावना करो कि सूर्यमंडल में गायत्री माता की छवि है, गायत्री माता हैं। इनका जो प्रकाश है वह हमारे सारे शरीर में, हमारे अंतरंग में सब जगह व्याप्त हो रहा है। यदि हम ऐसा समझने लगें, ऐसा सोचने लगें, ऐसा विचार करने लगें और ऐसी हमारी आस्था हो, तो फिर भगवान दूर कहाँ है? फिर और ज्यादा फासला नहीं है।

एक बार ऐसा हुआ कि भगवान और लक्ष्मी, दोनों में शर्त लग गई। उन्होंने कहा—देखो आपको कौन भजता है और कौन मेरा सम्मान करता है? तो उन्होंने लक्ष्मी से कहा कि पृथ्वी पर पहले तुम ही जाओ। वे आईं और जहाँ गईं, वहाँ धरती माँ जगमगाने लगीं, जहाँ जिसके घर पहुँच गई, उसका घर निहाल होता हुआ चला गया।

एक बार एक संत अपने शिष्यों सहित एक गाँव में पहुँचे। वहाँ के रहने वाले उजड्ड प्रवृत्ति के थे। उन्होंने संत के साथ बड़ी बदसलूकी की और उन्हें खाने-पीने को भी नहीं पूछा।

शाम को जब संत पूजा करने बैठे तो वे बोले—''ईश्वर बड़ा कृपालु है एवं भक्तवत्सल है।'' यह सुनकर उनके शिष्यों ने पूछा—''यह ईश्वर की कैसी अनुकंपा है—हम भूखे-प्यासे हैं और गाँववालों ने हमें इतना अपमानित किया। ईश्वर के भक्त होने के कारण क्या उसे हमारी देख-भाल नहीं करनी चाहिए?''

संत बोले—''चंद रोटी के टुकड़ों या ऐशोआराम की खातिर ईश्वर की भक्ति करना खुद को नरक में डालने के समान है।'' सच्चा साधक वही है, जो सुख-सुविधाओं की इच्छा किए बिना निष्काम भाव से प्रभुभक्ति में लीन रहता है।

फिर उन्होंने कहा—''देख लीजिए भगवन्! क्या हाल है? अब आप नीचे आइए और मैं ऊपर आती हूँ। आप नीचे पृथ्वीलोक पर जाइए।'' जब

भगवान पृथ्वीलोक आए, तो वहाँ जैसे ही वे आए तो पहले किसी में आस्था ही नहीं थी। थोड़ी-बहुत थी तो इतनी थी कि चलो हम उनके दर्शन कर आएँ।

अब वे मथुरा पहुँचे। मथुरा पहुँचे तो वहाँ न गोपियों ने छोड़ा, न ग्वाल-बालों ने छोड़ा, किसी ने नहीं छोड़ा। फिर उन्होंने कहा—अब कहाँ जाएँ भाई! फिर वे द्वारका चले गए, तो वहाँ भी लोग जा पहुँचे। उन्होंने कहा कि अब क्या करना चाहिए? फिर उन्होंने कहा कि अच्छा तो कैलास पर्वत पर चले जाएँ। वे शंकर जी के कैलास पर्वत पर चले गए कि अब तो कोई नहीं ढूँढ़ पाएगा। अरे, वहाँ भी लोगों ने ढूँढ़ निकाला, तो नारद जी आ गए। नारद जी से बोले—"भाई! ऐसा कौन-सा उपाय करना चाहिए, जिससे कि ये देख न पाएँ, ढूँढ़ न पाएँ?

उन्होंने कहा कि एक बात बता दें, हाँ बता दो, तो फिर आप एक काम कीजिए कि आप जाइए और लोगों के दिलों में बैठ जाइए। वहाँ कोई नहीं देखेगा, कोई भी आपको नहीं ढूँढ़ पाएगा। जो कोई अंतरंग में देखेगा, वही भगवान को पाएगा। उस दिन से कहते हैं कि भगवान हृदय में छिपकर बैठा है। भगवान को ढूँढ़ने के लिए हमें कहीं नहीं जाना पड़ेगा।

दर्शन माने फिलॉसफी

भगवान के हम दर्शन करने जाते हैं, लेकिन दर्शन एक फिलॉसफी भी है। उस फिलॉसफी को समझे बगैर हम जहाँ-तहाँ भटकते रहते हैं, अपने पैसे खराब करते रहते हैं। चलो साहब! कहाँ चलो? वहाँ जगन्नाथपुरी चलो, बदरीनाथ चलो और कहाँ चलो? केदारनाथ चलो, अच्छा साहब! बदरीनाथ चलो। अच्छा बदरीनाथ की फिलॉसफी मालूम है। बदरीनाथ में कृष्ण जी ने 12 साल तक तप किया था और उसके बाद रुक्मिणी जी के लड़का पैदा हुआ। इससे उनका इतना बड़ा परिवार हो गया। नाम मैं जरा भूल गई। प्रद्युम्न कुछ ऐसा ही नाम था। आप वहाँ तपश्चर्या करने के लिए जाते हैं और ढोक लगाकर आते हैं। आप बदरीविशाल पहुँच गए, वहाँ से फिर केदारनाथ पहुँच गए और वहाँ भी जय बोल आए और चले आए, लेकिन उसके पीछे छिपा हुआ जो शिक्षण है, वह कहाँ चला गया?

आप गंगोत्तरी जाते हैं और गंगोत्तरी जा करके एवं नहा करके वहाँ का सारा वातावरण गंदा और अशुद्ध कर आते हैं। टट्टी-पेशाब से सब जगह गंदगी फैल जाती है। गरमियों में कभी जाओ और फिर वहाँ ठहरने को मन करे तो एक ही नहीं 10 दफे सोचना पड़ता है।

ऐसा था, एक बार मैंने गुरुजी से कहा कि आप हिमालय गए हैं, मैं भी जाना चाहती हूँ कि जरा देख करके आऊँ। हो करके आऊँ। जरा मैं भी थोड़े दिन रह करके आऊँ। तब गरमी के दिन थे, उन्होंने कहा—मत जाना, मैंने कहा—क्यों मत जाना? मैंने कहा—आप तो एक साल रह करके आए हैं और मुझसे कह रहे हैं कि मत जाओ। उनने कहा—मेरी बात और थी, तुम्हारी और है।

मैंने कहा—मेरी क्या बात है? उन्होंने कहा—देखो वहाँ ऐसी घोर गंदगी है कि इस गंदगी के मारे नाक में बदबू आने लगेगी। इन दिनों तुमसे जरा देर भी ठहरा नहीं जाएगा। उन्होंने कहा—लोग वहाँ गंदगी फैलाने को जाते हैं। वहाँ न कोई गंगोत्तरी के दर्शन करने जाता है, न गंगोत्तरी नहाने जाता है। जाड़े की वजह से नहाया नहीं जाता, ठंढक की वजह से नहीं नहा पाते और दर्शन? दर्शन तो उस विशाल भगवान का कैसे कर पाएँगे? आप क्या दर्शन करेंगे उसका, दर्शन तो एक फिलॉसफी है।

बेटा दर्शन करने तो हम गए थे, जहाँ गुरुजी ने तपस्या की थी। उसमें एक शिला थी—भागीरथ शिला। तो मेरा मन हुआ कि जहाँ-जहाँ गुरुजी गए

हैं, वहाँ जाने का मेरा भी मन है। जहाँ उन्होंने तप किया है, मैंने बच्चों से कहा कि वहाँ तक जाना चाहती हूँ। दो, एक लड़कों को साथ ले गई थी। आज कहीं घूमने-घामने नहीं गई।

जहाँ भागीरथ शिला थी, गंगा में थोड़ा आचमन किया, स्नान भी किया और भागीरथ शिला पर मैं जा बैठी। आधा घंटा बैठ चुकी, उसी दिन लौटना था। अहा....इतना आनंद आया कि मैं आपसे वर्णन नहीं कर सकती। जहाँ उन्होंने तप किया था, मुझे अनेक रूपों में दिखाई पड़े। इसको आप पागलपन भी कह सकते हैं। इसको चाहे जो भी कह सकते हैं, लेकिन जो मैंने अनुभव किया वह अनुभव शायद किसी को भी नहीं होगा,कभी नहीं होगा। न हुआ होगा, न कभी होगा। उस शिला पर बैठते ही मैं अपनी सुध-बुध खो चुकी थी। लड़कों ने हिलाना शुरू कर दिया।

नहीं आपको चलना है, आप उठिए-आप उठिए। उस जगह को जब मैंने छोड़ा तो ऐसा मालूम पड़ा कि क्या छोड़ करके मैं यहाँ से जा रही हूँ, किसी अपने सगे को छोड़ करके मैं जा रही हूँ। मुझसे वह जगह छोड़ी नहीं जा रही थी। मुझे जोर से रोना आने लगा। लड़कों ने कहा—माताजी को ये क्या हो गया? यहाँ से जल्दी चलना चाहिए। मैं आपको दर्शन की, रोने वाली बात नहीं कह रही हूँ। यह भी एक उन्माद है। मैं तो यह कह रही हूँ कि वहाँ से शिक्षण ले करके आई कि हमें अश्वमेध यज्ञ करने हैं। हमें प्रेरणा मिली और उस प्रेरणा को हमने सब में बिखेर दिया और देखिए किस तरीके से सारी जनता में, जो हमारे अपने हैं, उनमें ज्वार-भाटा के तरीके से भावनाएँ उमड़ने लगी हैं।

साकार और निराकार उपासना

बेटे, यही तो है दर्शन और बाकी का दर्शन तो बेटा स्पर्श किया और चलते बने। पुजारी रोज़ भगवान को नहलाते हैं, लेकिन उनका भला नहीं होता। क्यों नहीं होता? क्योंकि पुजारी नहलाता है, खिलाता है, सुलाता है, लेकिन पुजारी में भावनाएँ नहीं हैं। आज हमारे राष्ट्र में कितने मंदिर हैं? हजारों मंदिर हैं, हजारों की तादाद में पुजारी हैं, फिर तो ये सभी पुजारी वैकुंठ को चले जाएँगे? ये वैकुंठ को नहीं जाएँगे। लिखवा लो, एकाएक नरक में जाएँगे।

ईसामसीह अपने शिष्यों के साथ यरूशलम पहुँचे। वहाँ के धर्मस्थल की शानोशौकत को देखकर वे बोले—"इसकी सारी भव्यता बेकार है। एक दिन ये गिरकर तबाह हो जाएगा।" उनकी बात सुनकर उनके शिष्य दुःखी हो गए।

वे उनसे कहने लगे—"आप प्रभु के घर के बारे में ऐसा क्यों सोचते हैं?"

ईसामसीह बोले—"मैं तुम्हें अपना ध्यान भगवान के उस मंदिर में लगाने को कहता हूँ, जो कभी नष्ट नहीं हो सकता। तुम्हारी अंतरात्मा प्रभु का शाश्वत निवासस्थान है। सारी दुनिया नष्ट भी हो जाए तो भी तुम अपने प्रभु का दर्शन वहाँ हमेशा कर सकते हो।" उनके कथन का मर्म शिष्यों की समझ में आ चुका था।

क्यों साहब! ये तो पुजारी हैं, ये नरक में क्यों जाएँगे? इसलिए जाएँगे कि उन्होंने भगवान के उस स्वरूप को नहीं देखा, जो मानव जाति के रूप में है। सुबह मैं निराकार और साकार की बात कर

रही थी कि निराकार के लिए पहुँचा तो जाता है, लेकिन देर लगती है। पहले हमको साकार बनाना पड़ता है और साकार में ही अपना ध्यान केंद्रित करना पड़ता है। जब उसमें हम पूरा ध्यान केंद्रित कर लेते हैं, तब फिर हम निराकार की उपासना करते हैं। निराकार की उपासना सबके बूते की नहीं है, सब नहीं कर सकते। कोई-न-कोई आकार चाहिए। इसलिए हमने गायत्री मंत्र की और गायत्री माता के स्वरूप की सुबह व्याख्या की थी।

आप लोगों को बताया था कि किस तरीके से आपको उपासना करनी चाहिए। एक तो निराकार भगवान है, निराकार तो नमन और नियंत्रण के अलावा कुछ करता भी नहीं है। नमन और नियंत्रण अच्छा कीजिए, अच्छा पाइए, बुरा करिए, बुरा पाइए। सीधी-साधी बात है कि विश्वमानव की तरफ से तो हम आँख मूँद लेते हैं, आँखें फेर लेते हैं। हमें आँखें नहीं फेरनी चाहिए, बल्कि हमें विश्व मानव की सेवा के लिए तत्पर रहना चाहिए।

मैंने अनेक सेवाएँ की, इन सब पहलुओं को सुबह आपको बताया था। मुझे आपसे एक ही निवेदन करना है, एक ही बात मुझे कहनी है कि आप 9 दिन का अनुष्ठान करने आए हैं या आई हैं। जो भी लड़कियाँ आई हैं,वे अपने आप को अपने इष्ट में इस कदर मिला लें कि आपके इष्ट और आपके अलावा तीसरे किसी की जरूरत नहीं हो। तीसरा आपके बीच में नहीं रहना चाहिए। न यहाँ कोई पति है, न कोई बेटा है, न कोई और है। यह मानकर चलो कि हम गुरुजी के बेटे हैं, गुरुजी की बेटी हैं।

हमारे साथ न ही औरत आई है और न तो वह हमारी धोती धोएगी और न हमारे लिए नहाने के लिए पानी लाएगी। भैया यहाँ न कोई किसी की औरत है, न कोई किसी का मर्द है। यहाँ सब गुरु जी के बेटे-बेटियाँ हैं, तो आप अपना काम स्वयं कीजिए, आप अपने में ही खोए रहिए। आप अपने में ही चिंतन करते रहिए कि आखिर आगे चल करके हमको क्या करना है? इस पृथ्वी पर भगवान ने हमको इतनी अमानत दे करके भेजा है, जितना कि और किसी के साथ में देकर नहीं भेजा।

मनुष्य को कितना कुछ मिला

भगवान ने इस माने में पक्षपात किया है। क्या पक्षपात किया है कि मनुष्य को शरीर दिया है,उसको अक्ल दी है। सारी-की-सारी विभूतियाँ मनुष्य को दे डाली हैं और किसी जीव के लिए नहीं रखा है, जैसे कि साँप बनाया तो पेट दे करके फेंक दिया और कुछ बनाया,तो चाहे जैसा बना दिया, लेकिन मनुष्य को बनाने में तो उसको पसीना आ गया होगा कि किस कदर उसने मेहनत की और बनाया।

इसके लिए मनुष्य के ऊपर करोड़ों रुपये निछावर करके फेंक दिए जाएँ, तब भी कम हैं। यदि कोई यह कहे कि हमें आपकी आँखें चाहिए, आप अपनी आँखें दे दीजिए और इतने लाख रुपये ले लीजिए। मैं कहती हूँ कि किसी को मोतियाबिंद हो जाए तो बात अलग है, अन्यथा तो कोई अपनी आँखें देने के लिए तैयार नहीं होगा। किसी की वैसे ही आँखें चली जाएँ, तो बात अलग है, पर वह अपनी आँखों को नहीं देगा। कोई यह कहे कि अपने दोनों हाथ दे दो और आप इतने लाख रुपये ले लो, तो कोई दे देगा? कोई भी नहीं देगा।

जब इतने करोड़ रुपये से ज्यादा की संपत्ति हम ले करके बैठे हैं, फिर कौन-सी चीज चाहिए? कैसा बढ़िया लेंस दिया, जो आप देख सकते हैं। आप सुन सकते हैं, यदि कान में बहरापन आ जाए तो सारा संगीत, सारे व्याख्यान बेकार हो जाएँ, आँखों की ज्योति चली जाए तो इतना बढ़िया संसार, कैसी फुलवारी है, इसको हम देख सकते हैं

क्या? हम नहीं देख सकते हैं। अक्ल काम न दे, बेकार हो जाए तो हम पागल हो जाएँगे। जरा-सा कोई पुरजा खराब हो जाए तो सारा-का-सारा हमारा जीवन बेकार हो सकता है, तो उस भगवान को हम बार-बार धन्यवाद क्यों न दें?

जिसने इतना बड़ा हमारा शरीर बनाया, इसमें इतनी अक्ल लड़ाई तो फिर हमको और किस चीज की आवश्यकता है? आवश्यकता है तो एक ही है कि हमारी-जो बे-अकली है, ये बे-अकली ठीक हो और भगवान हमको वह हिम्मत, वह साहस, मनोबल और संवेदना देता हुआ चला जाए, ताकि हम जिस तरीके से मक्खन पिघल जाता है और उसी तरीके से हम दूसरों के दु:खों और कष्टों को देख करके पिघलते हुए चले जाएँ।

संत के लिए कहा गया है—**संत हृदय नवनीत समाना**। नवनीत का मतलब है मक्खन, अर्थात हमारा हृदय मक्खन जैसा कोमल होना चाहिए। हमारा हृदय उदार होना चाहिए, हमारा हृदय परोपकारी होना चाहिए। अपने निहित स्वार्थों के लिए न जी करके परमार्थ के लिए भी जीने की हम कोशिश करें, उसी में हमारा कल्याण हो सकता है, भगवान की परिभाषा यही है।

भगवान को यदि हम पाना चाहते हैं, भगवान के निकट हम बैठना चाहते हैं तो अपने स्वार्थों को छोड़ना पड़ेगा। कर्त्तव्यनिष्ठा तो रखनी पड़ेगी। कर्त्तव्य को याद रखना पड़ेगा। आपके बीबी है, बच्चे हैं, तो आपका जो फर्ज और कर्त्तव्य है, उसका पालन तो करना पड़ेगा, लेकिन उस कर्त्तव्य पालन के साथ में एक और पालन करना होता है और एक उसमें जकड़ना होता है।

जिस तरीके से मकड़ी जाला बुनती है और उसी जाले में फँस जाती है, फिर जाले को समेट भी लेती है, उसको निगल जाती है और बाहर आ जाती है। आप भी लोभ, मोह और अहंकार की जंजीरों में जकड़ें नहीं। अपने आप को उन मोह, लोभ की जंजीरों से खुले रखें। आप खुले रहेंगे तो ही आप भगवान के निकट पहुँच सकते हैं, अन्यथा न तो भगवान आपके निकट आएगा और न आप भगवान के निकट जा पाएँगे।

नहीं साहब! भगवान बहुत दूर बैठा है। हम तो बहुत दूर हैं। नहीं, भगवान बिलकुल भी दूर नहीं है। वह हमारे समीप है, आस-पास है और आगे-पीछे है। यदि हम ये हिम्मत कर सकें, हम ये साहस दिखा सकें और हम अपना मनोबल दिखा सकें, अपनी श्रद्धा रख सकें, अपनी निष्ठा रख सकें तो हमारा कल्याण हो जाए। इन्हीं शब्दों के साथ मैं अपनी बात समाप्त करती हूँ। भगवान करे, आपका अनुष्ठान सब प्रकार से पूर्ण हो।

।। ॐ शांति ।।

वर्षा की फुहारों से धरती में से अनेक पौधे फूट पड़े। दुर्भाग्य से सब पौधे आपस में ही लड़ पड़े और उनमें से हरेक अपने को ज्यादा महत्त्वपूर्ण व उपयोगी बताने लगा। विवाद बढ़ता गया। छह माह ऐसे ही लड़ते-झगड़ते व्यतीत हो गए। ज्येष्ठ का आगमन हुआ तो उसके ताप से सारे पौधे सूख गए और जब साथियों के बिछड़ने की घड़ी आई तो उन्हें अनुभव हुआ कि उन्होंने पूरी उम्र यों ही लड़ने-झगड़ने में व्यतीत कर दी। दु:खी पौधों ने संकल्प लिया कि यदि पुनः अवसर मिला तो प्रेमपूर्वक रहेंगे। तब से पौधे हँसते-खेलते, सहयोग-सत्कार से रहते हैं, मात्र इनसान ही इस छोटी-सी बात को समझ नहीं पाता।

विश्वविद्यालय परिसर से —233

ज्ञान के बोध को कराने का पर्व

पूज्य गुरुदेव की साकार संकल्पना एवं युवाशक्ति देव संस्कृति विश्वविद्यालय अपने उद्देश्य मूल्यपरक शिक्षा की पूर्ति में निरंतर अग्रसर है। यहाँ विद्यार्थियों को व्यक्ति निर्माण, परिवार निर्माण एवं समाज निर्माण का बोध कराया जाता है। इसी क्रम में वर्ष 2024-2025 के नवीन सत्र का शुभारंभ ज्ञानदीक्षा संस्कार समारोह के माध्यम से किया गया। संस्कृति एवं आधुनिकता का अनोखा संगम इस समारोह में देखने को मिला। विश्वविद्यालय के सभी छात्र-छात्राएँ भारतीय वेशभूषा में संस्कार की परंपरा का पालन करते नजर आए।

इस वर्ष विभिन्न पाठ्यक्रमों यथा डिप्लोमा, स्नातक व परास्नातक में लगभग 500 विद्यार्थियों ने प्रवेश लिए हैं। इस प्रेरक समारोह के शुभ अवसर पर उत्तराखंड सरकार के माननीय उच्च शिक्षा, स्वास्थ्य एवं सहकारिता मंत्री डॉ० धनसिंह रावत, उत्तराखंड की प्रथम महिला कुलपति एवं देशभर में समान नागरिक संहिता को लागू करने वाली समिति की सदस्य दून विश्वविद्यालय की माननीय कुलपति प्रो० सुरेखा डंगवाल मुख्य अतिथि स्वरूप उपस्थित रहीं।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय के कुलगीत के माध्यम से इस ज्ञानदीक्षा समारोह का प्रारंभ किया गया। देव संस्कृति विश्वविद्यालय के माननीय कुलपति श्री शरद पारधी जी द्वारा सर्वप्रथम उपस्थित समस्त विशिष्ट अतिथि, नव-प्रवेशी एवं अन्य छात्र-छात्राओं समेत परिजनों का स्वागत किया गया। इस क्रम के उपरांत प्रतिकुलपति जी ने इस पावन ज्ञानदीक्षा समारोह की पृष्ठभूमि को सभी के सामने प्रस्तुत किया।

अपने उद्बोधन में उन्होंने कहा कि बाहर ज्ञानदीक्षा का पर्व ज्ञान का बोध कराने आता है और प्रकाश देकर जाता है। साथ ही उन्होंने बताया कि बाहरी खूबसूरती देने के लिए अनेक संस्थाएँ हैं, लेकिन आंतरिक खूबसूरती देने के लिए केवल देव संस्कृति विश्वविद्यालय है, जो विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास के लिए संकल्पित है।

वर्चुअल माध्यम से माननीय कुलाधिपति महोदय परमश्रद्धेय डॉ० प्रणव पण्ड्या जी द्वारा नव-प्रवेशी छात्र-छात्राओं को कर्मकांडीय विधा से दीक्षित कर, अपना आशीर्वचन प्रदान करते हुए देव संस्कृति विश्वविद्यालय परिवार में स्वागत किया गया। समारोह की अध्यक्षता करते हुए परमश्रद्धेय ने कहा कि ज्ञानदीक्षा संस्कार विद्यार्थियों को नवजीवन प्रदान करने वाला है।

उन्होंने आगे कहा कि सद्ज्ञान से आंतरिक चेतना का विकास होता है। शिक्षक व छात्र के बीच ऐसा सामंजस्य होना चाहिए, जिससे ज्ञान के आदान-प्रदान का क्रम सदैव बना रहे। इससे एक तरफ विद्यार्थियों में पात्रता का विकास होता है, तो वहीं दूसरी तरफ वे धर्म के अनुसार आचरण करने के लिए प्रेरित होते हैं।

परमश्रद्धेय ने यह भी कहा कि चेतनापरक विद्या की सदैव उपासना करनी चाहिए, जिससे अच्छाइयों की ओर सतत आगे बढ़ने हेतु आंतरिक क्षमता का विकास हो सके। उन्होंने बताया कि देव संस्कृति विश्वविद्यालय देश का ऐसा एकमात्र विश्वविद्यालय है, जहाँ दीक्षांत के साथ ही ज्ञानदीक्षा करने की परंपरा भी है, जो सन् 2002 से लगातार चली आ रही है।

44वें ज्ञानदीक्षा समारोह को संबोधित करते हुए उत्तराखंड सरकार के उच्च शिक्षा, स्वास्थ्य एवं सहकारिता मंत्री डॉ० धनसिंह रावत जी ने कहा कि देव संस्कृति विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित किया जाने वाला ज्ञानदीक्षा संस्कार समारोह एक बहुत ही अच्छा आयोजन है, जिसे राज्यभर के सभी विश्वविद्यालयों में आयोजित किया जाना चाहिए, जिसके लिए देव संस्कृति विश्वविद्यालय को एक गाइडलाइन तैयार करनी चाहिए।

उन्होंने कहा कि ऐसे ज्ञानदीक्षा संस्कार समारोह जैसे कार्यक्रमों के साथ जब विद्यार्थी विश्वविद्यालयों में आएगा तो रैगिंग जैसी परेशानियाँ भी जड़ से खतम हो जाएँगी। माननीय मंत्री डॉ० धनसिंह रावत जी ने अनुशासन का सकारात्मक उदाहरण प्रस्तुत करते हुए देव संस्कृति विश्वविद्यालय को सराहा एवं विद्यार्थियों को पारंपरिक भारतीय संस्कृति से जुड़ने के लिए सबको अपनी शुभकामनाएँ दीं।

इसी क्रम में कार्यक्रम को संबोधित करते हुए दून विश्वविद्यालय की माननीय कुलपति, प्रोफेसर सुरेखा डंगवाल जी द्वारा भारतीय संस्कृति, चरित्र निर्माण, तपस्या, अनुशासन नई शिक्षानीति एवं पारंपरिक शिक्षा-विद्या के ज्ञान को समझने के तथ्यों आदि पर प्रकाश डाला।

उन्होंने कहा कि भारत की शिक्षापद्धति में मौजूद जिन अनुपस्थित कड़ियों को जोड़ने के लिए राष्ट्रीय शिक्षानीति 2020 लाई गई थी, वह कार्य देव संस्कृति विश्वविद्यालय अपने प्रारंभिक दिनों से ही कर रहा है।

परमश्रद्धेय कुलाधिपति जी ने पूज्य गुरुदेव जैसे महामानवों को अपना आदर्श मानकर जीवन-पथ पर अग्रसर होने की प्रेरणा दी और लोक-मंगल के लिए विद्या विस्तार-अभियान को गति देने का आह्वान नए-पुराने विद्यार्थियों, आचार्यों एवं गायत्री परिवार के सभी सदस्यों से किया।

इस अवसर पर मुख्य अतिथियों द्वारा नव-प्रवेशी छात्र-छात्राओं को प्रतीकचिह्न के रूप में मंत्र चादर देकर उनका स्वागत किया गया। समारोह में धन्वंतरि, अनाहत पत्रिका एवं पर्यटन विभाग के विभागाध्यक्ष द्वारा लिखी गई पुस्तक 'स्वास्थ्य पर्यटन' का विमोचन किया गया।

प्रतिकुलपति जी द्वारा मुख्य अतिथियों को स्मृतिचिह्न, देवस्थापना चित्र, हस्तनिर्मित जूट बैग देकर सम्मानित किया गया। इस दौरान कुलसचिव बलदाऊ देवांगन, समस्त संकायाध्यक्ष, विभागाध्यक्ष, आचार्यगण, अधिकारी-कर्मचारीगण, शांतिकुंज के वरिष्ठ कार्यकर्त्ता, अभिभावकगण एवं देश-विदेश के अन्य सदस्य उपस्थित रहे।

विगत दिनों गुरुपूर्णिमा पर्व के पावन दिवस पर कानपुर नगर के विधायक श्री सुरेंद्र मैथानी जी का देव संस्कृति विश्वविद्यालय आगमन हुआ। माननीय विधायक महोदय ने प्रतिकुलपति जी से भेंट की।

भेंटवार्त्ता के दौरान प्रतिकुलपति जी ने विधायक जी को परमपूज्य गुरुदेव की वसुधैव कुटुंबकम् की संकल्पना से परिचित करवाते हुए भेंटस्वरूप परमपूज्य गुरुदेव का साहित्य प्रदान किया। विधायक जी ने कहा कि देव संस्कृति के आलोक विस्तार के लिए प्राचीनकाल के नालंदा, तक्षशिला जैसे विश्वविद्यालयों जैसी भूमिका का निर्वहन वर्तमान समय में देव संस्कृति विश्वविद्यालय कर रहा है।

सेंट्रल यूनिवर्सिटी ऑफ मणिपुर के 40 विद्यार्थियों एवं 2 स्टाफ सदस्यों का एक समूह भी विगत दिनों देव संस्कृति विश्वविद्यालय में पहुँचा। उनके आगमन का मुख्य उद्देश्य योग विज्ञान और वैकल्पिक उपचारों के विषय में अपना ज्ञानवर्द्धन

हेतु 10 दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम में प्रतिभाग करना रहा।

उद्घाटन समारोह के अवसर पर देव संस्कृति विश्वविद्यालय प्रतिकुलपति जी ने सभी सदस्यों को अपनी शुभकामनाएँ दीं। उन्होंने कहा कि व्यक्ति जीवन में दो प्रकार की संपदाएँ अर्जित करता है— भौतिक और आत्मिक। भौतिक संपदाओं में आकर्षण है, लेकिन सुख नहीं। जीवन का आनंद तो सद्‌गुणों और दैवी विभूतियों में है, जो व्यक्ति को महानता की ओर अग्रसर करते हैं।

उन्होंने आगे कहा कि आज का युवा पैकेज के पीछे भागता दिखाई देता है, लेकिन आवश्यकता अपने जीवन को आत्मबल, मनोबल एवं सद्‌गुण संपन्न बनाने की है। देव संस्कृति विश्वविद्यालय अपने विद्यार्थियों को सद्‌गुण संपन्न और संस्कारवान बनाता है।

सेंट्रल यूनिवर्सिटी के विद्यार्थियों ने देव संस्कृति विश्वविद्यालय के ज्ञानवर्द्धक दौरे का भरपूर आनंद लिया। उन्होंने यहाँ चल रही शैक्षणिक गतिविधियों के साथ योग, आयुर्वेद, यज्ञ एवं भारतीय संस्कृति से जुड़े अन्य तत्त्वों को जानने में भी रुचि दिखाई। साथ ही उन्हें नवयुग की गंगोत्तरी शांतिकुंज की आध्यात्मिक चेतना में भी स्नान का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

समापन के अवसर पर प्रतिकुलपति जी ने सभी सदस्यों को प्रमाणपत्र वितरित किए। उन्होंने उनके अनुशासन और ईमानदारी के लिए उनकी प्रशंसा की और अखिल विश्व गायत्री परिवार के आत्मीय सदस्य के रूप में उनका स्वागत किया व साथ ही भविष्य में पारिवारिक सदस्य के रूप में आते रहने के लिए प्रोत्साहित भी किया।

अखिल भारतीय पर्यावरण राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संयोजक माननीय श्री गोपाल आर्य जी एवं वैज्ञानिक अनुसंधान, प्रौद्योगिकी नवाचार और ए०आई० के माध्यम से व्यवसाय परामर्श में क्रांति लाने वाले भारत के 24 वर्षीय युवा करोड़पति पेटोनिक इन्फोटेक (ए०आई०) और प्लानेक्स के सीईओ एवं सहसंस्थापक युवराज भारद्वाज और यशराज भारद्वाज का आगमन 3 जुलाई को देसंविवि में हुआ।

उनके साथ ही 36 से ज़्यादा शोध परियोजनाओं और 15 से ज़्यादा पेटेंट दर्ज करवाने वाले एवं अपने मशहूर शोध बाजरा शोधक और ब्रेन-कंप्यूटर इंटरफेस जैसे बेहतरीन नवोन्मेषी शोधों के लिए कर्मवीर चक्र पुरस्कार, पद्मश्री अवार्ड नॉमिनी और गोल्डन ईगल अवार्ड, मलयेशिया जैसे पुरस्कार पाने वाले जुड़वाँ भाइयों एवं इंटेक्स टेक्नोलॉजी की मुख्य व्यवसाय अधिकारी ईशिता बंसल जी का आगमन जीवन विद्या के आलोक केंद्र, देव संस्कृति विश्वविद्यालय में हुआ। प्रतिकुलपति जी ने सभी का हार्दिक अभिनंदन एवं स्वागत किया।

इसी दौरान प्रतिकुलपति ने मृत्युंजय सभागार, बाल्टिक केंद्र एवं स्वावलंबन केंद्र सहित विश्वविद्यालय के विभिन्न प्रकल्पों की गतिविधियों से भी उन्हें अवगत कराया। अतिथियों को पूज्य गुरुदेव का साहित्य, स्वावलंबन केंद्र में निर्मित जूट बैग एवं स्मृतिचिह्न प्रतिकुलपति जी ने भेंट किए। ❑

पथिक फलों से लदे वृक्ष को देखकर बोला—"तुम तो फल-फूल रहे हो और मैं भूखा मर रहा हूँ। भगवान ने मेरे साथ यह अन्याय क्यों किया।" वृक्ष हँसते हुए बोला—"तुम यदि मेरे पतझड़ के कष्टों को देखते तो अनुभव कर पाते कि ये फल मैंने कितनी कठिन तपश्चर्या से प्राप्त किए हैं। तुम भी वैसा पुरुषार्थ करके देखो, उसी से जीवन में समृद्धि और संतुष्टि आती है।"

साधना शताब्दी—विशिष्ट लेखमाला

पर्वतों पर उतरती प्रकाश-किरणें

पर्वतों पर प्रकाश किरणों के अवतरण से इनकी आंतरिक स्थिति बदलेगी। वैज्ञानिकों के अनुसंधान कहते हैं कि धरती पर करोड़ों वर्ष पूर्व जब हलचल हुई, तब विशाल भू-भाग सरकते हुए आपस में टकराए, जिससे विशाल पर्वतों का निर्माण हुआ। हालाँकि पर्वतों-पहाड़ों की कोई सार्वभौमिक रूप से स्वीकृत परिभाषा नहीं है। इन्हें परिभाषित करने के लिए ऊँचाई, आयतन, राहत, खड़ीपन, दूरी और निरंतरता को मानदंड के रूप में इस्तेमाल किया गया है।

पर्वतीय पर्यावरण की परिभाषा में इसकी सात कक्षाएँ गिनाई गई हैं। इनमें से पहली कक्षा में 4,500 मीटर से अधिक ऊँचाई वाले पर्वत हैं। दूसरी कक्षा में 3,500 से 4,500 मीटर के बीच की ऊँचाई वाले पर्वत हैं। तीसरी कक्षा में 2,500 से 3,500 मीटर के बीच की ऊँचाई वाले पर्वत हैं। चौथी कक्षा में 1,500 से 2,500 मीटर की ऊँचाई और 2 डिगरी से अधिक ढलान वाले पर्वतों की गणना होती है।

पाँचवीं कक्षा में 1000 मीटर से 1500 की बीच की ऊँचाई एवं 5 डिगरी से अधिक ढलान वाले पर्वतों को गिना जाता है। छठवीं कक्षा में 300 मीटर से 1000 मीटर के बीच की ऊँचाई वाले पर्वतों को गिनते हैं एवं कक्षा सातवीं के क्रम में 25 किलोमीटर से कम के क्षेत्र में पृथक आंतरिक बेसिन और पठार, जो पूरी तरह से कक्षा 1 से 6 तक के पहाड़ों से घिरे हुए, लेकिन स्वयं इनके मानकों को पूरा नहीं करते, उनकी गिनती होती है।

इन परिभाषाओं को पूरा करते हुए यूरेशिया का 33 प्रतिशत, दक्षिण अमेरिका का 19 प्रतिशत, उत्तरी अमेरिका का 24 प्रतिशत और अफ्रीका का 14 प्रतिशत हिस्सा पर्वतीय है। इस तरह से समूची पृथ्वी की 24 प्रतिशत भूमिका द्रव्यमान पर्वतीय है। विशेषज्ञों ने इनके पाँच प्रकार गिनाए हैं— (1) वलित पर्वत, (2) भ्रंशोत्थ या ब्लाक पर्वत, (3) होर्स्ट पर्वत, (4) ज्वालामुखी पर्वत एवं (5) अवशिष्ट पर्वत।

आसुरी अँधियारे में अंधकारित हुए मानव मन ने पर्वतीय क्षेत्र में अँधेरा फैलाने में बढ़-चढ़कर अपनी हिस्सेदारी निभाई। अब तो यह समस्या अकेले किसी एक देश की नहीं, समूची दुनिया की है। कोई अकेला व्यक्ति नहीं, बल्कि संपूर्ण मानव जाति इससे जूझ रही है। अब तो वैज्ञानिक समुदाय इस सच को स्वीकारने, समझने और समझाने लगे हैं कि पर्वतीय पर्यावरण की बिगड़ती स्थिति के कारण ही ऋतुचक्र में भारी बदलाव एवं विपर्यय आया है।

इस क्रम में समूचे विश्व में विभिन्न पर्वत शृंखलाएँ हैं, जिनमें कुछ की ख्याति अधिक है। इनमें से एशिया में हिमालय व हिंदुकुश, अफ्रीका में एटलस, उत्तरी अमेरिका में रॉकी, दक्षिण अमेरिका में एंडीज एवं यूरोप में आल्प्स को विशेष महत्त्व प्राप्त है। पहाड़ों पर ऊँचाई के कारण मौसम अपेक्षाकृत ठंढा रहता है। ये ठंढे मौसम पहाड़ों के

पर्यावरण को बहुत प्रभावित करते हैं, जिसके कारण अलग-अलग ऊँचाई पर अलग-अलग पौधे और जानवर मिलते हैं। यहाँ की जलवायु के कारण पर्वतीय क्षेत्र का उपयोग कृषि के लिए कम और संसाधन निष्कर्षण एवं पर्यटन के लिए अधिक होता है। पर्वतों पर बहुत ज्यादा वन होते हैं, जो उस क्षेत्र में वर्षा के लिए विशेष कारगर साबित होते हैं।

आधुनिक वैज्ञानिक हों अथवा प्राचीन ऋषि-महर्षि—सभी ने मानव जीवन, पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी के लिए पर्वतों के महत्त्व को स्वीकार किया है। अथर्व० में '**गिरयस्ते पर्वता हिमवन्तः**' अथर्व०—12.1.11 से हिमाच्छादित अनेक पर्वतों का ज्ञान होता है। अथर्ववेद के 10 मंत्रों में 'हिमवत्' शब्द का प्रयोग हुआ है। इसमें हिमालय की पर्वत शृंखलाओं का उल्लेख है। कुष्ठ औषधि का हिमालय पर होना बताया गया है। इसके साथ अन्य अनेकों औषधियों के हिमालय पर होने की बात कही गई है। इसमें प्रार्थना की गई है—'**शं त आपो हैमवतीः**' अथर्व०—19.2.1 यानी हिमालय से निकलने वाली नदियों का जल सुखद हो।

इसके अलावा त्रिककुद पर्वत को पर्वतों में श्रेष्ठ माना गया है। '**वर्षिष्ठः पर्वतानां त्रिककुत्**' अथर्व०—4.9.8। इस पर्वत पर अंजन होने की बात कही गई है। '**यदाञ्जनं त्रैककुदं जातं हिमवतस्परि**'। अथर्व०—4.9.9। संभवतः यही वर्तमान समय का सुलेमान पर्वत है, जहाँ आज भी सुरमा होता है। पश्चिमी विद्वान कीथ ने इसे वर्तमान त्रिकोट माना है।

ऋग्वेद, यजुर्वेद, तैत्तिरीय संहिता एवं काठक संहिता आदि में मूजवत् पर्वत का उल्लेख मिलता है। यह हिंदूकुश पर्वत की शाखा है, जो भारतवर्ष के उत्तर पश्चिम में है। इस पर्वत पर सोमलता होने की बात कही गई है। इसी कारण ऋग्वेद में '**सोमस्येव मौजवतस्य भक्ष०**' सोमलता को मौजवत् कहा गया है। तैत्तिरीय आरण्यक (1.7) में महामेरु का स्पष्ट उल्लेख है। इसके लिए कहा गया है कि कश्यप नामक सूर्य इसे कभी नहीं छोड़ता। यह उत्तरी ध्रुव की पर्वतमाला के लिए है।

तैत्तिरीय आरण्यक (1.31) में क्रौंच, मैनाक और सुदर्शन पर्वतों के नाम मिलते हैं। वेदों में विंध्य पर्वत का उल्लेख दक्षिण पर्वत नाम से किया गया है। जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण में उत्तर पर्वत और दक्षिण पर्वत का उल्लेख है। दक्षिण पर्वत से विंध्य पर्वत का ही उल्लेख ज्ञात होता है।

विवरण अनेकों हैं। वेदों में, पुराणों में ऐसे अनेकों वर्णन हैं, ऐसी असंख्य कथाएँ हैं, जिनसे धरती के जीवन में पर्वतों की महिमा व महत्ता कही गई है। इनके नष्ट होने पर प्रकृति-पर्यावरण व पारिस्थितिकी पर क्या प्रभाव पड़ेगा, यह भी कहा-बताया और समझाया गया है। विज्ञान विशेषज्ञों ने भी इसी को बदले हुए शब्दों में कहा और दोहराया है।

पर्वतों से प्राप्त होने वाले अमूल्य खनिज—बहुमूल्य एवं गुप्त संपत्ति ही तो हैं; जिन्हें आज के युग में बहुत कुछ हमने खो दिया है, बहुत कुछ खोते जा रहे हैं। इस स्थिति में बदलाव, पुरातन का नवीन आगमन—युग का प्रत्यावर्तन एवं परिवर्तन ही तो है। आगे आने वाले वर्षों में इसी को संभव और साकार होना है।

धरती की प्राकृतिक अवस्था एवं व्यवस्था को बनाए रखने वाले पर्वत, पर्यावरण व पारिस्थितिकी में संतुलन बनाने वाली ये पर्वत शृंखलाएँ बीते वर्षों में अनेकों कारणों से क्षतिग्रस्त हुई हैं। इन अनेकों कारणों में मानवीय कारण एक अति प्रमुख कारण बना है। यही वजह है कि

पर्वतीय संपदा—विपदा में बदली है। यहाँ के वन उजड़े हैं, भाँति-भाँति के प्रयोजनों के लिए बनाई गई सुरंगों ने यहाँ की स्वाभाविकता नष्ट की है।

इसके लिए जिम्मेदार हम सबकी सामूहिक संकीर्ण सोच एवं अदूरदर्शी दृष्टिकोण है और अधिक पाने के लोभ में न जाने कितनी वनस्पतियों एवं जीवों की प्रजातियाँ नष्ट हो गईं। पर्वतों की स्वाभाविक संरचना भी क्षत-विक्षत हो गई। आसुरी अँधियारे में अंधकारित हुए मानव मन ने पर्वतीय क्षेत्र में अँधेरा फैलाने में बढ़-चढ़कर अपनी हिस्सेदारी निभाई।

अब तो यह समस्या अकेले किसी एक देश की नहीं, समूची दुनिया की है। कोई अकेला व्यक्ति नहीं, बल्कि संपूर्ण मानव जाति इससे जूझ रही है। अब तो वैज्ञानिक समुदाय इस सच को स्वीकारने, समझने और समझाने लगे हैं कि पर्वतीय पर्यावरण की बिगड़ती स्थिति के कारण ही ऋतुचक्र में भारी बदलाव एवं विपर्यय आया है। यही वजह है कि मौसम कुछ-का-कुछ होने लगा है।

स्थिति में बदलाव तो तभी होगा, जब पर्वतों पर दैवी प्रकाश उतरे। साधना शताब्दी या यों कहें कि शतवर्षीय महातप के परिणाम इसी रूप में सामने आएँगे। प्रकृति एवं जीवन चेतना की उच्च कक्षाओं से अवतरित हो रही प्रकाश की किरणें सबसे पहले पर्वतों पर फैलेंगी।

इससे उनकी आंतरिक संरचना में अनेकों सकारात्मक एवं सार्थक परिवर्तन आएँगे। कुछ ऐसे ही परिवर्तन जैसे कि भारत देश की वैदिक सभ्यता एवं संस्कृति ने कभी देखे थे। जिसकी वजह से ऋग्वेद में कहा गया था—**'वसुमन्तं वि पर्वतम्'** ऋग्वेद—2.24.2 एवं **'परिवीतम् अश्मनि अनन्ते'** ऋग्वेद—1.130.3 पर्वतों में धन है। उसमें गुप्त खजाना है। पर्वतों से प्राप्त होने वाले अमूल्य खनिज—बहुमूल्य एवं गुप्त संपत्ति ही तो हैं; जिन्हें आज के युग में बहुत कुछ हमने खो दिया है, बहुत कुछ खोते जा रहे हैं।

इस स्थिति में बदलाव, पुरातन का नवीन आगमन—युग का प्रत्यावर्तन एवं परिवर्तन ही तो है। आगे आने वाले वर्षों में इसी को संभव और साकार होना है। महर्षि पतंजलि ने योगसूत्र में मानव जीवन चेतना से संबंधित एक आश्चर्यजनक सूत्र कहा है। उनका कथन है—**अस्तेयप्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम्॥** *2/37* यदि जीवन में चोरी न करने का भाव दृढ़ हो जाए, तो उसके सामने सब प्रकार के रत्नभंडार प्रकट हो जाते हैं।

मानव ने व्यक्तिगत एवं सामूहिक स्तर पर जब से प्रकृति के पर्वतीय खजाने को चुराना,

---

मनुष्य जाति ने तात्कालिक लाभों के समक्ष विपुल दूरगामी लाभों को ठुकरा दिया। पर प्रकृति के दोहन के इन अदूरदर्शी प्रयासों के दुष्परिणामों से स्वयं बचा न रह सका। समस्त विश्व के समक्ष प्रस्तुत होने वाली अनेकानेक प्रकार की प्राकृतिक विभीषिकाएँ वस्तुतः मानवीय दुष्कृत्यों और अदूरदर्शी प्रयासों का ही प्रतिफल हैं।

छीनना, झपटना, लूट-पाट करना आरंभ किया है; तब से पर्वतीय खजाने भी विलुप्त हो गए हैं। धरती के जीवन को संरक्षण व पोषण देने वाले पर्वत, मनुष्य की शोषण वृत्ति के कारण भय की भयानकता के संकेत देने लगे हैं। मनुष्य बदलेगा, तो पर्वतों की स्थिति भी बदल जाएगी। तब पर्वतों में उतरने वाली प्रकाश किरणें, इनमें छिपे रत्नभंडार को भी अनायास प्रकट करेंगी। ऐसा ही परिवर्तन नदियों एवं समुद्र की जलराशि में भी दिखाई देने लगेगा। ❑

अपनों से अपनी बात

मानवीय चेतना की अपरिमित शक्ति

मनुष्य जीवन का मूल्य उसकी चेतन सत्ता के कारण है। मानवीय चेतना में ऐसी शक्तियाँ व विभूतियाँ सन्निहित हैं कि यदि मनुष्य उनका समुचित उपयोग कर सके तो वह अतुलनीय व अकल्पनीय सामर्थ्य का धनी बन सकता है, परंतु दुर्भाग्यवश, क्षुद्र कामनाओं की प्राप्ति में ही वह इतना उलझा नजर आता है कि उससे कोई महती पुरुषार्थ कर पाना संभव नहीं हो पाता। अपने स्थूल, सूक्ष्म व कारणशरीरों का सम्यक उपयोग न कर पाने के कारण ही मनुष्य एक साधारण-सा जीवन जीता नजर आता है, जबकि उसके अंदर संभावनाएँ, अनंत सामर्थ्य व अपरिमित शक्ति की हैं।

अपनी चेतन सत्ता को प्रसुप्त, विस्मृत व उपेक्षित कर देने के कारण—मनुष्य का जीवन, प्रगति व विकास के मार्ग पर पूर्णतया रुका हुआ नजर आता है। यदि उसकी ऊर्जा, श्रम, समय, सामर्थ्य व मनोयोग—मात्र जीवन निर्वाह के उद्देश्यों को पूरा करने में ही लगे रहें तो उससे कोई अतिमानवीय कार्य कर पाना संभव कैसे हो सकता है, सत्य तो यह है कि हमें मिले ईश्वरीय अनुदान का मात्र एक अल्प अंश ही हमें पेट व परिवार की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए पर्याप्त है, परंतु हम अपने जीवन का एकमात्र उद्देश्य, यही मानकर जीते हुए नजर आते हैं। प्रकृति के भंडारगृह के अधिपति को यदि दो वक्त की रोटी का इंतजाम करने में ही जुता देखा जाए तो इससे ज्यादा बड़ा दुर्भाग्यशाली और क्या कहा जा सकता है ?

मानवीय संपदाओं व ईश्वरप्रदत्त विभूतियों का सम्यक मूल्यांकन आध्यात्मिक ज्ञान द्वारा ही संभव है। जब आत्मज्ञान होता है, आँखों पर छाया माया व व्यामोह का परदा हटता है, तभी स्वयं में निहित अतुलनीय सामर्थ्यों को पहचानने का सुयोग बन पाता है। उसके अभाव में मनुष्य भवबंधनों में पड़ा कराहता रहता है और माया के दुश्चक्र में फँस कर उन्हीं कार्यों को बार-बार करता हुआ भिन्न परिणामों की मिथ्या आशा रखे जीवन गुजारता रहता है।

माया की तुलना एक प्रकार की खुमारी से की जा सकती है, जिसमें अंतर्चक्षुओं पर अज्ञान का परदा डल जाता है और मनुष्य शाश्वत सत्य व सार्वभौम मूल्यों को त्यागकर क्षुद्र व निकृष्ट कामनाओं की पूर्ति में जीवन को लगा देने या यों कहें कि गँवा देने में ही जीवन का सार समझता है।

ईश्वरीय सत्ता का अंश होने पर भी मनुष्य इस माया के दुश्चक्र में कैसे फँसता है, इसके लिए महर्षि पतंजलि, योगसूत्र में कहते हैं कि इसके मूल में चित्त की वृत्तियाँ जिम्मेदार कही जा सकती हैं, जो कि क्लेश की ओर भी ले जा सकती हैं और अक्लेश की ओर भी(**वृत्तयः पञ्चतय्यः क्लिष्टाक्लिष्टाः**)। अर्थात मन ही माया की जड़ है, यह चाहे तो बंधन का कारण बन सकता है और ये चाहे तो मुक्ति का द्वार बन सकता है। यदि मनुष्य वृत्तियों का अनुगामी, मन का दास बन जाता है तो जन्म-जन्मांतरों तक यों ही भटकता रहता है अन्यथा मन से उपराम हो जाने पर, चित्त निर्भार हो जाता

है व मनुष्य आत्मज्ञान को उपलब्ध हो जाता है। इसी ओर इशारा करते हुए भगवान श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं—

इन्द्रियाणां हि चरतां, यन्मनोऽनु विधीयते।
तदस्य हरति प्रज्ञां, वायुर्नावमिवाम्भसि॥ 67

अर्थात जैसे जल में चलने वाली नाव को वायु हर लेती है, वैसे ही विषयों के पीछे भागती इंद्रियों वाले मन की बुद्धि हर जाती है।

जिस प्रकार ज्यादा लालच की चाह मक्खी के जीवन को, विपत्ति से जकड़ देती है व प्राण का संकट उपस्थित कर देती है—वैसे ही न पूरी होने वाली चाहत, मनुष्य को जन्म-जन्मांतरों में भटकने की अंतहीन यात्रा पर निकाल देती है। सुख की चाह में मनुष्य दुःख को अपना साथी बनाता चला जाता है।

आटे की गोली खाने की चाह में मछली काँटे का शिकार हो जाती है, वैसे ही वासनाओं को तृप्त करने की आसक्ति के पीछे भागता मनुष्य—सदैव अतृप्त रहता हुआ, स्वयं के लिए कर्मों के अंतहीन जंजाल को खड़ा करता रहता है।

शरीर की इंद्रियों से मिलने वाले भोगों के साथ हमारे तादात्म्य का स्थापित हो जाना ही माया है। शरीर हमें उपकरण के रूप में मिला है, मन हमें सहयोगी के रूप में मिला है, परंतु हम शरीर की इच्छाओं के दास बनकर, मन की कामनाओं के गुलाम बनकर अपना जीवन काटने की दौड़ में लगकर अपनी स्थिति दयनीय कर बैठते हैं। हमारे तीनों शरीर, हमें 3 तरह के बंधनों से जकड़ते हैं। स्थूलशरीर वासनाओं में उलझाता है, सूक्ष्मशरीर कामनाओं में व कारणशरीर आकांक्षाओं में, पर यदि मनुष्य को अपनी दिव्यता का भान हो जाए तो ये तीनों शरीर ही मुक्ति का द्वार बन जाते हैं।

वैसा होते ही, वासनाएँ वैराग्य में बदलती हैं, कामनाएँ विवेक में व आकांक्षाएँ समर्पण में बदल जाती हैं। ऐसी स्थिति में मनुष्य आत्मज्ञान को प्राप्त होता है। इसी ओर इशारा करते हुए महर्षि पतंजलि कहते हैं—

क्षीणवृत्तेरभिजातस्येव मणेर्ग्रहीतृग्रहणग्राह्येषु तत्स्थतदञ्जनता समापत्तिः॥ 1/41

अर्थात जिसकी समस्त वृत्तियाँ क्षीण हो चुकी हैं, ऐसे स्फटिक मणि की भाँति निर्मल चित्त का जो ग्रहिता, ग्रहण तथा ग्राह्य में स्थित हो जाना और तदाकार हो जाना है, यही समाधि है।

इस प्रकार सत्य यही है कि मनुष्य को अपनी चेतन सत्ता का प्रयोग भवबंधनों से मुक्ति हेतु करना चाहिए। भवबंधन अर्थात काम, क्रोध, लोभ एवं मोह। इनसे बँधा हुआ व्यक्ति ही मायाग्रस्त है और इनसे मुक्त हुआ व्यक्ति अपने स्वरूप को प्राप्त कर आत्मज्ञान को उपलब्ध हो जाता है, उसी को परिभाषित करते हुए—**तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्**। ये मानवीय जीवन का चरमोत्कर्ष कर्म है। ❑

मिट्टी का एक कण, पानी की एक बूँद, वायु की एक लहर, अग्नि की एक चिनगारी और आकाश का एक स्फुल्लिंग-एकत्रित हुए और भगवान से प्रार्थना करने लगे कि 'हे प्रभु! हम पाँच तत्त्व हैं, हमें सविता देव जैसा प्रकाशमय व ऐश्वर्ययुक्त बना दें।'

परमात्मा की वाणी सुनाई पड़ी—भास्कर के समान तेजस्वी बनना है तो किसी से कुछ माँगो मत। बस, अपना जो कुछ भी है वह प्राणिमात्र की सेवा में उत्सर्ग करना आरंभ कर दो, तुम्हारा तेज व ऐश्वर्य स्वयं बढ़ जाएगा।

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

आप को सादर प्रणाम

Shantikunj Rishi Chintan के विडियो को अपने मित्रों के साथ शेयर जरूर करें।

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel के वीडियो युग निर्माण मिशन के लिए समर्पित है! हमारा एकमात्र उद्देश्य परम पूज्य गुरुदेव के विचारों को जन-जन तक पहुंचाने का है।

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं।

आप भी हमारे साथ जुड़ कर इस विचार क्रांति योजना में सहभागी अवश्य बनें।

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel को **Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये** और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

धन्यवाद

☞ शांतिकुंज हरिद्वार के Official WhatsApp Channel awgpofficial Shantikunj चैनल को Follow करने के लिए Link पर Click करें https://whatsapp.com/channel/0029VaBQpZm6hENhqlhg453J

Shantikunj WhatsApp:- शांतिकुंज की गतिविधियों से जुड़ने के लिए 8439014110 पर अपना नाम लिख कर WhatsApp करें

All World Gayatri Pariwar Official Social Media Platform

Official Facebook Page:- https://www.facebook.com/awgpofficial

Official Twitter:- https://twitter.com/awgpofficial

https://twitter.com/DrChinmayP

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

Official Instagram:- https://www.instagram.com/awgpofficial

Official Telegram:- https://t.me/awgpofficial

https://t.me/shantikunjrishichintan

https://t.me/awgpofficialgroup

Youtube Channel:- https://www.youtube.com/c/RishiChintan

https://www.youtube.com/c/shantikunjvideo

AWGP Official Website:- http://www.awgp.org/

http://literature.awgp.org

आत्म-साधना

करें साधना, लेकिन पहले मन को साधें,
आत्म-साधना में इस तरह प्रखरता ला दें।

मन पंछी है, उड़ना तो उसका स्वभाव है,
एक ठौर से कभी नहीं उसका लगाव है,
चपल हिरण की तरह कुलाचें भरता रहता,
वायुभूत होकर हर निमिष विचरता रहता,
अतः उसे हम मंगलकारी नई दिशा दें।
आत्म-साधना में इस तरह प्रखरता ला दें।

शक्तिपुंज है मन, विभूतियों का स्वामी है,
तन भरता रहता केवल उसकी हामी है,
जहाँ सरसता हो, आकर्षित हो जाता है,
सब कुछ भुला उसी में उस क्षण खो जाता है,
जीवन में कुछ रसमयता हम और बढ़ा दें।
आत्म-साधना में इस तरह प्रखरता ला दें।

अच्छा हो, मन पर बिलकुल भी बोझ न डालें,
जिससे भार बढ़े, उसको तत्काल निकालें,
रह पाएगा अपना मन यदि हलका-फुलका,
कहीं आँख के आगे होगा नहीं धुँधलका,
दुर्भावों का बोझ न बिलकुल मन पर ला दें।
आत्म-साधना में इस तरह प्रखरता ला दें।

मन सध गया, समूचा जीवन सध जाएगा,
तन भी मलय पवन का अनुभव कर पाएगा,
फिर जिस ओर समय का एक इशारा होगा,
उसी दिशा में मार्गांतरण हमारा होगा,
मन के माध्यम से जीवन को सहज बना दें।
आत्म-साधना में इस तरह प्रखरता ला दें।

—शचींद्र भटनागर

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◀

अखण्ड ज्योति
(मासिक)
R.N.I. No. 2162/52

www.awgp.org

प्र. ति. 01-10-2024
Regd. No. Mathura - 025/2024-2026
Licensed to Post without Prepayment
No. : Agra/WPP - 08/2024-2026

देव संस्कृति विश्वविद्यालय में **'भविष्य का भारत व हमारी भूमिका'** विषय पर आयोजित विचार संगोष्ठी पतंजलि विश्वविद्यालय के कुलाधिपति योगगुरु स्वामी रामदेव जी एवं राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के वरिष्ठ प्रचारक तथा अखिल भारतीय संपर्क प्रमुख माननीय श्री रामलाल जी की पावन उपस्थिति में संपन्न

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक-मृत्युंजय शर्मा द्वारा जनजागरण प्रेस, बिरला मंदिर के सामने, जयसिंहपुरा, मथुरा से मुद्रित व अखण्ड ज्योति संस्थान, बिरला मंदिर के सामने, मथुरा-वृंदावन रोड जयसिंहपुरा, मथुरा-281003 से प्रकाशित। संपादक-डॉ. प्रणव पण्ड्या।

दूरभाष — 0565- 2403940, 2972449, 2412272, 2412273 **मोबाइल** — 09927086291, 07534812036, 07534812037, 07534812038, 07534812039

ई-मेल— akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org

श्रावण शिवरात्रि के पावन अवसर पर शांतिकुंज के सृजन सेनानियों द्वारा हरीतिमा संवर्द्धन, जनजागरण हेतु एक विशाल शोभायात्रा का आयोजन एवं नगर भ्रमण